अंक 2-3
संख्या 1

सोमवार
20 जनवरी
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय-पत्रों को देना और रजिसटर पर हस्ताक्षर 1
2. विधान-परिषद् के प्रतिनिधि-स्वरूप के बारे में पार्लियामेंट में लगाये गये अभियोगों पर अध्यक्ष का वक्तव्य 1
3. हिन्दुस्तान में प्रकाशित मंत्रिमंडल के 16 मई सन् 1946 ई. के बयान और मेम्बरों को दी हुई उसकी छपी हुई पुस्तिका-रूप में भिन्नता के बारे में अध्यक्ष का वक्तव्य 2
4. स्टीयरिंग कमेटी के बारे में प्रस्ताव 2
5. लक्ष्य सम्बंधी प्रस्ताव 4

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 20 जनवरी, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में दिन के ग्यारह बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में हुई।

परिचय-पत्रों को देना और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

नीचे लिखे मैं मैम्बरों ने अपने परिचय-पत्र दिये और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये।

1. डॉ. एच.सी. मुखर्जी।

2. श्री बालकृष्ण शर्मा।

विधान-परिषद् के प्रतिनिधि-स्वरूप के बारे में पार्लियामेंट में लगाये हुए अभियोगों पर अध्यक्ष का वक्तव्य

***अध्यक्ष:** काम शुरू करने से पहले मैं कुछ बातों के बारे में दो वक्तव्य देना चाहता हूं। पिछली दिसम्बर को कामन्स-सभा और लाड्र्स-सभा में कुछ ऐसे बयान दिये गये जिनमें इस असेम्बली के पिछले अधिवेशन के प्रतिनिधि-स्वरूप को अपमानित किया गया। इस सम्बन्ध में जो लोग बोले उनमें मि. चर्चिल और वाइकाउंट साइमन उल्लेखनीय है। मि. चर्चिल ने कहा कि यह असेम्बली जिस रूप में पिछली बार सम्मिलित हुई थी, इसमें हिन्दुस्तान की केवल एक बड़ी जाति का प्रतिनिधित्व हुआ था। वाइकाउंट साइमन ने इसे कुछ अधिक स्पष्ट कर दिया और कहा कि यह असेम्बली ''हिंदुओं की एक सभा है।'' वे आगे चलकर पूछते हैं कि ''क्या दिल्ली में होने वाली सवर्ण हिंदुओं की इस सभा को सरकार को अपने अर्थ में विधान-परिषद् समझना चाहिए?''

ये दोनों सज्जन उत्तरदायित्व के सर्वोच्च पदों पर रहे हैं और हिंदुस्तान के मामलों से इनका बहुत काल तक निकट सम्बन्ध रहा है, चाहे वर्तमान राजनैतिक वाद-विवाद के सम्बन्ध में उनका जो भी मत हो, मुझे विश्वास है कि वे ऐसे बयान नहीं देना चाहेंगे जो वस्तुस्थिति के बिल्कुल विपरीत हों और जिनसे दुष्टतापूर्ण अनुमान निकाले जा सकते हों। इसी कारण मैं इस अवसर पर रस्मी तौर पर सच्ची हालत बता देना आवश्यक समझता हूं। प्रारिम्भक अधिवेशन में 296 मैम्बर भाग लेने वाले थे परन्तु उनमें से 210 मैम्बर आये। इन 210 मैम्बरों में से 155 हिन्दू थे जबकि उनकी कुल संख्या 160 थी; 30 परिगणित जातियों के मैम्बर थे जबकि उनकी कुल संख्या 33 थी; पांचों सिख मैम्बर थे; 6 देशी ईसाइयों के मैम्बर थे जबकि उनकी कुल संख्या 7 थी; पिछड़ी हुई जातियों के पांचों मैम्बर थे; एंग्लो इंडियनों के तीनों मैम्बर थे; पारसियों के तीनों मैम्बर थे; और मुसलमानों के 4 मैम्बर थे जबकि उनकी कुल संख्या 80 थी, मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

की अनुपस्थिति निस्सन्देह उल्लेखनीय है। इसके लिए हम सबको खेद है। लेकिन जो आंकड़े मैंने दिए हैं, उनसे स्पष्ट है कि मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों के अलावा हिन्दुस्तान की हर एक जाति के प्रतिनिधि, चाहे जिस पार्टी से उनका सम्बन्ध रहा हो, इस असेम्बली में आये और इसलिए इस असेम्बली को हिन्दुस्तान की ''एक ही बड़ी जाति की प्रतिनिधि कहना'' या ''हिन्दुओं की एक सभा'' या सवर्ण हिन्दुओं की सभा कहना, वस्तुस्थिति को बिल्कुल गलत तरीके से रखना है। (*हर्ष ध्वनि*)

हिन्दुस्तान में प्रकाशित मंत्रिमंडल के 16 मई, सन् 1946 ई. के बयान और मैम्बरों को दी हुई उसकी छपी हुई पुस्तिका-रूप में भिन्नता के बारे में अध्यक्ष का वक्तव्य।

***अध्यक्षः** मैम्बरों को याद होगा कि पं. जवाहरलाल नेहरू के प्रस्ताव पर विधान-परिषद् में जो वाद-विवाद हो रहा था उसके सिलसिले में मि. जयपालसिंह ने यह बताया था कि मंत्रिमंडल का 16 मई, सन् 1946 ई. का बयान जैसा कि वह हिन्दुस्तान में प्रकाशित हुआ और जैसा कि उसे असेम्बली के दफ्तर ने पुस्तिका के रूप में बांटा, उनमें भिन्नता है। जिस भिन्नता का हवाला दिया गया वह बयान के पैराग्राफ 20 में थी। उनकी यह शिकायत थी कि जो बयान हिन्दुस्तान में पहले प्रकाशित हुआ था, उसमें सम्बन्धित हितों का पूरा प्रतिनिधित्व लिखा हुआ है और हमने दुबारा जिस रूप में उसे छापा उसमें सिर्फ उचित प्रतिनिधित्व लिखा हुआ है। इस बीच मैंने इस मामले की जांच करवाई।

भारत सरकार के प्रिन्सिपल इंफार्मेशन अफसर, जिन्होंने हिन्दुस्तान में बयान को शुरू में प्रकाशित किया, पूछने पर बताते हैं कि वह ठीक उस प्रति के अनुरूप छापा गया जो कि उन्हें मंत्रिमंडल के इंफार्मेशन अफसर से प्राप्त हुई। हमने जो पुस्तिका छापी है वह उस व्हाइट पेपर की ठीक नकल है जो कि पार्लियामेंट में पेश किया गया। यह जान पड़ता है कि हिन्दुस्तान में प्रकाशित हुए बयान में उसे पार्लियामेंट में पेश करने के पहले मंत्रिमंडल ने कुछ बदलाव कर दिये।

मि. जयपालसिंह ने जो भिन्नता बताई केवल वही नहीं है। कुछ अन्य भी है। लेकिन मुझे सन्तोष है कि जहां कहीं भी ये बदलाव किये गये हैं वहां वे अधिकतर केवल शाब्दिक हैं। लेकिन पैराग्राफ 20 में जो बदलाव किया गया है वह केवल शाब्दिक है या नहीं, यह अपने-अपने मत की बात है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं नहीं समझता कि कोई खास बदलाव किया गया है।

स्टीयरिंग कमेटी के बारे में प्रस्ताव

***अध्यक्षः** अब कार्यक्रम में दूसरा विषय श्री सत्यनारायण सिन्हा का प्रस्ताव है।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल): सभापति महोदय, मेरे नाम से जो प्रस्ताव है उसे मैं पेश करता हूं:-

यह निश्चय किया जाता है कि यह असेम्बली विधान-परिषद् के नियमों के नियम 40(1) में बताये हुये तरीके के अनुसार (अध्यक्ष के अलावा) उन ग्यारह मैम्बरों को चुनने का काम शुरू करती है जो स्टीयरिंग कमेटी के मैम्बर होंगे।

श्रीमान् आपकी आज्ञा से मैं इस सभा के सामने इस कमेटी के बारे में उन नियमों को पढ़ना चाहता हूं जो कि हमने पिछले अधिवेशन में पास किये थे।

यह असेम्बली समय-समय पर ऐसे तरीके से जिसे वह उचित समझे, ग्यारह मैम्बरों के अलावा आठ अतिरिक्त मैम्बरों को चुनेगी जिनमें से चार मैम्बरों की जगहें देशी रियासतों के प्रतिनिधियों में से चुने जाने के लिए सुरक्षित रखी जायेंगी।

अध्यक्ष, पद की हैसियत से, स्टीयरिंग कमेटी के मैम्बर होंगे और पद की हैसियत से उसके सभापति भी होंगे। कमेटी अपने मैम्बरों में से किसी मैम्बर को उप-सभापति निर्वाचित करेगी जो सभापति की अनुपस्थिति में कमेटी के सभापति होंगे।

असेम्बली के सेक्रेटरी, पद की हैसियत से स्टीयरिंग कमेटी के सेक्रेटरी होंगे।

कमेटी में अकस्मात् जो जगहें खाली होंगी उन्हें खाली होने पर असेम्बली चुनाव द्वारा यथाशीघ्र ऐसे तरीके से भरेगी जिसे कि सभापति निश्चित करेंगे।

41(1) कमेटी:

(क) प्रतिदिन के काम को क्रमानुसार रखेगी,

(ख) एक तरह के प्रस्तावों और संशोधनों को एक साथ रखेगी और, यदि सम्भव हो तो, एक तरह के प्रस्तावों और संशोधनों पर सम्बन्धित पार्टियों को सहमत करायेगी,

(ग) असेम्बली और सेक्शनों के बीच, सेक्शनों के बीच, कमेटियों के बीच, और अध्यक्ष और असेम्बली के किसी भाग के बीच, सम्बन्ध स्थापित करने वाली साधारण समिति का काम करेगी, और

(घ) नियमों के आधीन या असेम्बली या अध्यक्ष द्वारा उसको सुपुर्द किये हुए किसी मामले को तय करेगी।

(2) स्टीयरिंग कमेटी के कार्य-संचालन के लिए अध्यक्ष स्थाई आज्ञायें जारी करेंगे।

यदि सभा मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करे तो अध्यक्ष यह ऐलान करेंगे कि किस तारीख और किस समय तक नाम प्राप्त हो जाने चाहिएं और यदि चुनाव की आवश्यकता हो तो वह कब तक होगा।

***श्री मोहनलाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): मैं इसका समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** क्या कोई मैम्बर इस प्रस्ताव पर बोलना चाहते हैं। चूंकि कोई सज्जन नहीं बोलना चाहते इसलिये मैं इस प्रस्ताव पर सभा का वोट लूंगा। प्रस्ताव यह है:

> ''यह निश्चय किया जाता है कि यह असेम्बली विधान-परिषद् के नियमों के नियम 40(1) में बताये हुये तरीके अनुसार (अध्यक्ष के अलावा) उन ग्यारह मैम्बरों को चुनने का काम शुरू करती है जो स्टीयरिंग कमेटी के मैम्बर होंगे।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** मुझे माननीय मैम्बरों को यह सूचित करना है कि आज पांच बजे तक नोटिस आफिस में स्टीयरिंग कमेटी के लिए नाम आ जाने चाहिएं। यदि आवश्यक होगा तो चुनाव अंडर-सेक्रेटरी के कमरे में (कमरा नं. 24, सतह की मंजिल, काउंसिल हाउस), 21 जनवरी को तीन और पांच बजे शाम के बीच होगा।

लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव—(पिछली संख्या से आगे)

***अध्यक्ष:** अब हम पंडित जवाहरलाल नेहरू के पिछले अधिवेशन में पेश किये हुए प्रस्ताव पर बहस शुरू करेंगे।

***सर एस. राधाकृष्णन** (संयुक्तप्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं बड़े हर्ष से यह सिफारिश करता हूं कि इस सभा को यह प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिये। संशोधनों की जो सूची पेश की गई है उसमें मैं देखता हूं कि तीन अलग-अलग सवाल उठाये गये हैं—यानी आया इस तरह की घोषणा आवश्यक है, आया इस घोषणा पर विचार करने के लिये यह उचित समय है, और आया इस प्रस्ताव में जिन लक्ष्यों की ओर संकेत किया गया है उनके बारे में सभी लोग सहमत हैं या उनको बदलने या संशोधित करने की आवश्यकता है।

मेरा यह विश्वास है कि इस प्रकार की घोषणा आवश्यक है। ऐसे लोग भी है जो बहमी हैं, जो हिचकिचाते रहते हैं, या जिन्हें इस विधान-परिषद् के कार्य से अत्यन्त दुराशा है। ऐसे लोग भी हैं जो दृढ़ता से कहते हैं कि मन्त्रिमंडल की योजना के अन्तर्गत देश में न तो वास्तविक एकता को स्थापित करना सम्भव होगा और न सच्ची स्वतंत्रता या आर्थिक सुरक्षा को प्राप्त करना। वे हमसे कहते हैं कि उन्होंने पिंजड़े के अन्दर गिलहरियों को घूमते हुये देखा है और यह कि मन्त्रिमंडल के बयान की चौहदी के अन्दर हमारे लिये यह सम्भव न होगा कि हम उन क्रांतिकारी परिवर्तनों को कर सकें जिनकी ओर देश बढ़ रहा है। वे इतिहास को सामने रखकर यह तर्क देते हैं कि हिंसात्मक कार्य द्वारा पहले से स्थापित संस्कारों का तख्ता उलट कर ही क्रांतिकारी परिवर्तन हो सकते हैं। अंग्रेजों ने राजसत्तात्मक एकतन्त्र को इसी तरह खत्म किया, संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने भी आरम्भ में सीधी चोट द्वारा ही स्वतन्त्रता प्राप्त की; फ्रांसीसी वोल्शेवी, फासिस्ट और नाजी क्रान्तियां भी इन्हीं तरीकों से की गईं। हमसे कहा जाता है कि हम शान्तिपूर्वक उपायों से, सलाह लेकर या विधान-परिषदों में बहस करके, क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं कर सकते हैं। हमारा जवाब यह है कि हमारा लक्ष्य भी वही है जो आपका। हम भारतीय समाज में मौलिक परिवर्तन करना चाहते हैं। हम अपनी राजनैतिक व आर्थिक पराधीनता का अन्त करना चाहते हैं वे लोग जिनका आत्मबल बढ़ा चढ़ा होता, जिनकी दृष्टि संकुचित नहीं होती है, अवसर से लाभ उठाते हैं वे अपने लिये अवसर पैदा करते हैं। हमें यह अवसर प्राप्त हुआ है और इससे लाभ उठाकर हम जानना चाहते हैं कि क्या ऐसे तरीकों को काम में लाकर, जो पहले इतिहास में कभी काम में नहीं लाये गये, हमारे लिये अपने क्रांतिकारी उद्देश्यों को पूरा करना सम्भव है या नहीं। हम यही देखने के लिये कोशिश कर रहे हैं कि क्या हमारे लिए आसानी से और तुरन्त ही दासत्व की अवस्था को त्याग कर स्वतंत्रता की अवस्था प्राप्त करना सम्भव है या नहीं। इस असेम्बली को यही आश्वासन देना है। हम उन सबसे, जो इस असेम्बली में नहीं आये हैं, यह कहना चाहते हैं कि हमारी इच्छा यह कभी भी नहीं है कि हम किसी वर्ग विशेष की सरकार स्थापित करें। हम यहां किसी जाति-विशेष या किसी विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के लिये कोई मांग करने नहीं आये हैं। हम यहां सभी भारतीयों के लिये स्वराज्य की स्थापना का कार्य कर रहे हैं। हम हर प्रकार के स्वेच्छाचारी शासन

को और निर्जीव परम्परा की हर एक टूटी-फूटी चीज को खत्म करने का प्रयत्न करेंगे। हम यहां ऐसी व्यवस्था करने के लिये सम्मिलित हुए हैं जिससे इस देश के जनसाधारण की, चाहे वे किसी भी जाति, धर्म या सम्प्रदाय के ही मौलिक आवश्यकतायें वास्तव में पूरी हो सकें। यदि तुरही से संदेशजनक आवाज निकले तो लोग हमारा समर्थन करने नहीं आयेंगे। इसलिये यह आवश्यक है कि हमारी तुरही की आवाज, हमारी शंखध्वनि, स्पष्ट हो जिससे लोगों के हृदय आल्हादित हों और बहमी व अलग रहने वाले लोगों को दुबारा यह आश्वासन मिले कि हम यहां इस संकल्प से आये हैं कि सारे भारतवर्ष को स्वाधीन बनायें और यह कि यहां किसी व्यक्ति को बिना किसी दोष के तंगी का सामना नहीं करना पड़ेगा और किसी वर्ग को अपनी सांस्कृतिक उन्नति के लिए कुंठित न किया जायेगा। इसलिये मेरा विश्वास है कि इस प्रकार के लक्ष्य-सम्बन्धी घोषणा की आवश्यकता है और हमें उस समय के लिए रुके रहने की कोई आवश्यकता नहीं है जबकि इस असेम्बली में आज दिन से अधिक प्रतिनिधि आ जायेंगे।

अब मैं अपने लक्ष्य के विषय में कहूंगा। हम यह निश्चय करते हैं कि हिन्दुस्तान स्वतंत्र सार्वभौम-सत्ता-सम्पन्न जन-तन्त्र होगा। स्वतंत्रता के प्रश्न पर कोई मतभेद नहीं है। प्रधानमन्त्री एटली अपने पहले वक्तव्य में, जो उन्होंने 5 मार्च को दिया, कहते हैं:–

> ''मैं आशा करता हूं कि भारतीय ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहने का निश्चय करेंगे। मुझे विश्वास है कि ऐसा करने में उन्हें बहुत लाभ दिखाई देगा लेकिन यदि वह ऐसा निश्चय करें तो यह स्वतन्त्र इच्छा से होना चाहिये। ब्रिटिश साम्राज्य ब्रिटिश कामनवेल्थ के साथ किसी बाहरी दबाव से नहीं है। लेकिन इसके विपरीत यदि वह स्वतन्त्र होने का निश्चय करे तो हमारे मत में उसे इसका अधिकार है।''

मुस्लिम लीग और नरेश सब इस पर सहमत हैं। रियासतों की सन्धियों और सर्वोच्च-सत्ता के बारे में मन्त्रिमंडल ने नरेन्द्रमंडल के चांसलर को 12 मई, सन् 1946 ई. को जो स्मृति-पत्र दिया है उसमें कहा गया है—

> ''नरेन्द्रमंडल ने तब से इसका समर्थन किया है कि भारतीय रियासतों की भी आमतौर से सारे देश की तरह यही इच्छा है कि हिन्दुस्तान तुरन्त ही अपने पूर्ण विकसित स्वरूप को प्राप्त हो। सम्राट की सरकार ने भी अब यह घोषित कर दिया है कि यदि ब्रिटिश भारत का उत्तराधिकारी सरकार या सरकारें स्वतन्त्रता की घोषणा करें तो उनके रास्ते में कोई अड़ंगा न लगाया जायेगा। इन घोषणाओं का यह असर हुआ है कि सभी लोग जो हिन्दुस्तान के भविष्य के लिये चिन्तित हैं, चाहते हैं कि यह स्वाधीनता की स्थिति को प्राप्त हो, चाहे वह यह स्थिति ब्रिटिश कामनवेल्थ के अन्दर रहकर प्राप्त करें या उसके बाहर रह कर।''

कांग्रेस, मुस्लिम लीग और दूसरे संगठन और नरेश जो कोई भी हिन्दुस्तान के भविष्य के लिये चिन्तित हैं, यही चाहते हैं कि वह स्वतन्त्र हो, चाहे वह ब्रिटिश कामनवेल्थ के अन्दर रहे या बाहर।

महोदय, सम्राट की सरकार की स्वतन्त्रता की भेंट का उल्लेख करते हुए मि. चर्चिल ने 1 जुलाई, सन् 1946 ई. को कामन्स-सभा में कहा था—

[सर एस. राधाकृष्णन]

> ''लेकिन यह दूसरी बात है कि हम इस कार्यप्रणाली को छोटा कर दें और कहें लीजिए, स्वतन्त्रता अभी लीजिये''। यह सरकार देखेगी ही और वह भी जल्दी ही। उन्हें इसे नहीं भूलना चाहिए। सरकार जिन लोगों से बातचीत कर रही है उन्हें तुरन्त ही पूर्ण स्वतन्त्रता स्वीकार करने में संकोच नहीं होगा। यह होने ही वाला है।''

इस लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव का उद्देश्य मि. चर्चिल को निराश करना नहीं है। (वाह-वाह) यह उन्हें बताता है कि जिसकी आशा की जाती थी वह हो रहा है। आपने यह हमारी इच्छा पर छोड़ दिया कि हम ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहें या न रहें। हम ब्रिटिश कामनवेल्थ में न रहने का निश्चय कर रहे हैं। क्या मैं इसका कारण बता सकता हूं? जहां तक हिन्दुस्तान का सम्बन्ध है यह आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, कैनेडा या दक्षिणी अफ्रीका की तरह सिर्फ उपनिवेश नहीं है। इनका ग्रेट ब्रिटेन से जातीय, धार्मिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध है। हिन्दुस्तान की जनसंख्या विशाल है और उसके विपुल प्राकृतिक साधन हैं उसकी एक महान् सांस्कृतिक परम्परा रही है और बहुत काल तक उसने स्वतन्त्र जीवन व्यतीत किया है। इसलिए इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती कि हिन्दुस्तान दूसरे उपनिवेशों की तरह एक उपनिवेश है।

इसके अलावा हमें इस पर विचार करना है कि संयुक्त राष्ट्र-संघ में जो कुछ हुआ उसका क्या अर्थ है। जब भारतीय प्रतिनिधि मंडल ने हमारी प्रतिष्ठित सहचरी श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित के नेतृत्व में दक्षिणी भारत के भारतीयों की सुरक्षा के लिए योग्यता से दलीलें पेश कीं तो ब्रिटेन ने कैसा रुख दिखाया। ग्रेट ब्रिटेन ने कैनेडा और आस्ट्रेलिया के साथ दक्षिण अफ्रीका का समर्थन किया। न्यूजीलैंड ने किसी तरफ वोट नहीं दी। इससे स्पष्ट है कि ब्रिटेन और दूसरे उपनिवेशों के आदेशों में सामंजस्य है, लेकिन यह हिन्दुस्तान के लिए नहीं कहा जा सकता। ब्रिटिश कामनवेल्थ में रहने का कोई अर्थ नहीं है। हमें यह अनुभव नहीं होता कि ब्रिटिश कामनवेल्थ के विभिन्न भागों में रहते हुए हमें समान अधिकार प्राप्त हैं। आपमें से कुछ सज्जनों ने यह भी सुना होगा कि मि. चर्चिल और लार्ड टेम्पलवुड ने एक यूरोपीय संघ के लिये हाल में काम शुरू किया है जिसका अध्यक्ष और संरक्षक ग्रेट ब्रिटेन होगा इससे भी मालूम होता है कि हवा का रुख क्या है।

फिर भी यदि हिन्दुस्तान ब्रिटिश कामनवेल्थ से अलग होने का भी निश्चय करे तो भी स्वेच्छा से सहयोग करने और व्यापार, रक्षा और सांस्कृतिक मामलों में एक दूसरे का हाथ बटाने के सैकड़ों तरीके हैं, लेकिन ग्रेट ब्रिटेन ने इस संकट के समय जो रुख दिखाये वह उसी पर निर्भर है कि मैत्री, विश्वास और सामंजस्य की भावना से यह पारस्परिक सहयोग उत्तरोत्तर बढ़े या पारस्परिक विश्वास और कटुता से खत्म हो जायें। यह मालूम पड़ता है कि भारतीय रिपब्लिक से सम्बन्धित इस प्रस्ताव में मि. चर्चिल और उनके अनुयायी रुष्ट हो गये हैं। हमारे सभापति महोदय ने आज मि. चर्चिल के एक बयान का हवाला दिया है, मैं कुछ दूसरे बयानों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करूंगा।

जब बर्मा के विषय में वाद-विवाद हुआ तो मि. चर्चिल ने कहा कि बर्मा उस

समय साम्राज्य में मिलाया गया था जब कि उसके पिता सेक्रेटरी थे और अब बर्मा को इसकी स्वतन्त्रता दे दी गई है कि वह साम्राज्य में रहे या न रहे। यह जान पड़ता है कि वे बर्मा और हिन्दुस्तान को अपनी पैत्रृक सम्पत्ति के भाग समझते हैं चूंकि अब वे हाथ से निकले जा रहे हैं, इसलिए उनको बहुत ही अफसोस हो रहा है।

हिन्दुस्तान के बारे में जब वाद-विवाद हो रहा था तो उन्होंने श्रीमान् सम्राट की सरकार से कहा कि उसे ''मुसलमानों के प्रति, जिनकी संख्या 9 करोड़ है और हिन्दुस्तान के सैनिकों में जिनका बाहुल्य है।'' और ''4 से 6 करोड़ अछूतों के प्रति'' अपने उत्तरदायित्व को ध्यान में रखना चाहिये। भारत से सम्बन्धित वाद-विवाद और अन्तर्राष्ट्रीय बातचीत में सत्य का मान नहीं किया जाता। महान् कांग्रेस दल के प्रतिनिधियों के बारे में वे कहते हैं कि ''वे परिश्रम से संगठित और बाहरी दबाव से बनाये हुए अल्पसंख्यकों के वक्ता हैं जिन्होंने बलपूर्वक या चालबाजी से शक्ति अपने हाथों में ले ली है और वे उस शक्ति का प्रयोग विशाल जनसाधारण के नाम पर करते हैं, हालांकि उनका जनसाधारण से कभी का सम्बन्ध टूट गया है और उन पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं है''।

यह वह दल है जिससे सदस्यों ने जीवन के कष्टों का बहादुरी से सामना किया है, देश के लिए जिन्हें कष्ट झेलने पड़े हैं जिनका देश-प्रेम और त्याग संसार में अद्वितीय है और जिनका नेता एक ऐसा व्यक्ति है जो आज के दिन हिन्दुस्तान के एक सुदूर प्रदेश में एकाकी जीवन व्यतीत कर रहा है और जिस वृद्ध पुरुष के कंधों पर राष्ट्र के शोक और सन्ताप का भार है। ऐसे दल का इस तरह उल्लेख करना, जैसे कि मि. चर्चिल ने किया है—मेरी समझ में नहीं आता है कि मैं इसे क्या कहूं। *(अफसोस की आवाजें)* मि. चर्चिल के उद्‌गारों में कुछ भी गम्भीरता या विवेक नहीं है। उत्तेजनापूर्ण और असंगत बातें कहकर और हमारे साम्प्रदायिक भेदभाव का उपहास करके उन्होंने इस अवसर पर व अन्य अवसरों पर अपने भाषण को प्रभावपूर्ण बनाया है। मैं यहां सिर्फ यह कहूंगा कि इस तरह के भाषणों और वक्तव्यों से यह नहीं हो सकता कि हम अपने लक्ष्य को प्राप्त न करें। हां, इतना हो सकता है कि कुछ ढील-ढिलाव हो जाये और कष्ट अधिक काल तक झेलना पड़े। अंग्रेजों से सम्बन्ध टूट कर ही रहेगा और उसे टूटना ही चाहिये। इस सम्बन्ध के टूटने पर मैत्री और सद्‌भाव हो या दु:ख और उत्पीड़न यह सब कुछ इस पर निर्भर है कि अंग्रेज इस महान प्रश्न को किस तरह सुलझाते हैं।

रिपब्लिक एक ऐसा शब्द है जिसने इस देश के रियासतों के प्रतिनिधियों को विचलित कर दिया है। इस मंच से हमने यह कहा है कि भारतीय रिपब्लिक का यह अर्थ नहीं है कि नरेशों का शासन खत्म हो जायेगा, नरेश रह सकते हैं। यदि नरेश अपने को वैधानिक और रियासतों के लोगों के प्रति उत्तरदायी बना लें तो वे रहेंगे। यदि सर्वोच्च-शक्ति ही जिसने इस देश को जीत का सार्वभौम सत्ता प्राप्त की है, लोगों के प्रतिनिधियों को अधिकार हस्तान्तरित कर रही है तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वे लोग जो उस सर्वोच्च शक्ति के आधीन हैं वही करें जो कि अंग्रेज कर रहे हैं, उन्हें भी चाहिए कि वे लोगों के प्रतिनिधियों को अधिकार हस्तान्तरित करें।

हम यह नहीं कह सकते कि इस देश की गणतंत्रात्मक परम्परा नहीं रही है। इतिहास बतलाता है कि बहुत प्राचीनकाल से यह प्रथा चली आई है, जब उत्तर

[सर एस. राधाकृष्णन]

भारत के कुछ व्यापारी दक्षिण गये तो दक्षिण के एक नरेश ने उनसे पूछा 'आपका राजा कौन है'? उन्होंने जवाब दिया, 'हम में से कुछ पर परिषद् शासन करती है, और कुछ पर राजा'।

'केचिद्देशो गणाधीना केचिद राजाधीना'

पाणिनी, मेगस्थनीज और कौटिल्य, प्राचीन भारत के रिपब्लिकों का उल्लेख करते हैं। महात्मा बुद्ध कपिलवस्तु की रिपब्लिक के निवासी थे।

लोगों की सार्वभौम सत्ता के बारे में बहुत कछ कहा गया है। हमारी वह धारणा है कि सार्वभौम सत्ता का आधार अंतिम रूप से नैतिक सिद्धांत है, मनुष्य मात्र का अन्तःकरण है। लोग और राजा भी उसके आधीन हैं। धर्म राजाओं का भी राजा है।

'धर्म्मम् क्षात्रस्य क्षात्रम्'

वह लोगों और राजाओं दोनों का शासक है। हमने कानून की सार्वभौम सत्ता पर भी जोर दिया है। नरेश, जिनमें से बहुत से मेरे मित्र हैं, मंत्रिमंडल के वक्तव्य पर सहमत हैं और वे देश की भावी उन्नति में हाथ बंटाना चाहते हैं। मुझे आशा है कि वे अपने लोगों की उभरती हुई आकांक्षाओं की ओर ध्यान देंगे और अपने को उत्तरदायी बनायेंगे। यदि वे ऐसा करें तो वे देश के निर्माण में महत्वपूर्ण भाग लेंगे। हमारा नरेशों से कुछ द्वेष नहीं है। गणतंत्र या लोगों की सार्वभौम सत्ता पर जोर देने का यह अर्थ नहीं है कि हम नरेशों के शासन के विरुद्ध हैं। उसका सम्बन्ध देशी रियासतों की वर्तमान परिस्थिति या उनके प्राचीन इतिहास से नहीं है बल्कि यह रियासतों के लोगों की भविष्य की आकांक्षाओं की ओर संकेत करता है।

दूसरी बात जिसका उल्लेख इस प्रस्ताव में किया गया है वह भारतीय यूनियन के बारे में है। मंत्रिमंडल के बयान में हिन्दुस्तान के विभाजन के विरुद्ध निर्णय दिया गया है। भूगोल उसके विरुद्ध है। सैन्य संचालन में भी उससे रुकावट पड़ती है। इस समय जो धारा बह रही है वह बड़े-से-बड़े समूहों के अनुकूल है। देखिए अमरीका, कैनेडा और स्वीट्जरलैंड में क्या हुआ? मिश्र सूडान से मिल जाना चाहता है, दक्षिण आयरलैंड उत्तरी आयरलैंड से मिल जाना चाहता है, फिलिस्तीन विभाजन का विरोध कर रहा है। आधुनिक जीवन का आधार राष्ट्रीयता है न कि धर्म। एलनवाई के मिश्र में चलाए हुए स्वतंत्रता के आन्दोलन, अरब में लारेन्स के साहसपूर्ण कार्य, कमालपाशा का तुर्की को बलपूर्वक पार्थिक रूप देना, इस ओर संकेत करते हैं कि धार्मिक राज्यों के दिन ढल गए हैं। आजकल राष्ट्रीयता का जमाना है। इस देश में हिंदू और मुसलमान एक हजार वर्ष से भी अधिक समय से साथ-साथ रहते आये हैं। वे एक ही देश के रहने वाले हैं और एक ही भाषा बोलते हैं। उनकी जातीय परम्परा एक ही है। उन्हें एक ही प्रकार के भविष्य का निर्माण करना है। वे एक दूसरे में गुथे हुए हैं। हम अपने देश के किसी भी भाग को अल्सटर की तरह अलग नहीं कर सकते। हमारा अल्सटर सार्वभौम है। यदि हम दो राज्य भी स्थापित करें तो उनमें बहुत बड़े अल्पसंख्यक समूह होंगे और वे अल्संख्यक चाहे इन पर अत्याचार हो या न हो अपनी रक्षा के लिए अपनी सरहदों के उस पार से सहायता मांगेगे। इससे निरंतर कलह होगा और वह उस समय तक चलता रहेगा जब तक भारत एक संयुक्त राष्ट्र न हो जाये। हम यह अनुभव करते हैं कि सभी लोगों को संगठित करने के लिए एक

शक्तिशाली केन्द्र की आवश्यकता है। लेकिन कुछ निर्देशों के कारण, चाहे वे वास्तविक हों या काल्पनिक, हमें एक ऐसे केन्द्र से सन्तोष कर लेना है जिसको केवल वे तीन विषय दिये गए हैं जिन्हें कि मंत्रिमंडल ने हमारे सामने रखा है इस प्रकार हम प्रान्तीय स्वशासन के सिद्धान्त को अपनाकर काम कर रहे हैं जिसके अन्तर्गत अवशिष्ट अधिकार प्रान्तों के ही होंगे। बिहार और बंगाल में जो घटनायें घटित हुई हैं उनको देखते हुए केन्द्र का शक्तिशाली होना आवश्यक है। लेकिन चूंकि ये कठिनाइयां हैं, हमारी तजवीज यह है कि एक बहुराष्ट्रीय राज्य का निर्माण किया जाये जिसमें विभिन्न संस्कृतियों को अपने विकास का पर्याप्त अवसर मिले।

समूहबन्दी के कारण हमें बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है, लेकिन समूह बन्दी दो आवश्यक बातों पर निर्भर है, जोकि मंत्रिमंडल की योजना के ही अंग हैं, यानी यूनियन का केन्द्र और अवशिष्ट अधिकार प्राप्त प्रान्त। इन समूहों में भी बड़े-बड़े अल्पसंख्यक समूह होंगे। जो लोग अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर जोर दे रहे हैं उन्हें ऐसे दूसरे लोगों को भी ये अधिकार देने होंगे जो समूहों में सम्मिलित हैं। सर स्टैफोर्ड क्रिप्स ने 19 जुलाई, सन् 1946 ई. को जो वक्तव्य दिया उसमें कहा:—

> ''यह भ्रम प्रकट किया गया है कि यह सम्भव है कि नये प्रान्तीय विधान इस प्रकार बनाये जायेंगे कि बाद को प्रान्तों के लिए सम्बन्ध विच्छेद करना असम्भव हो जायेगा। मेरी समझ में नहीं आता कि यह कैसे सम्भव होगा। लेकिन यदि ऐसी कोई बात की जाये तो यह स्पष्टत: इस योजना के आधारभूत आशय के ही विपरीत होगा।''

सर स्टैफोर्ड क्रिप्स ने यह कहा है कि यदि निर्वाचक-समूहों को इस प्रकार बनाने का प्रयत्न किया गया कि प्रान्तों के लिए स्वेच्छा से बाहर निकलना ही मुश्किल हो जाये तो यह सर स्टैफोर्ड क्रिप्स के शब्दों में इस योजना के आधारभूत आशय के विपरीत होगा। आखिर हमने साथ रहना है और यह बिल्कुल असम्भव है कि कोई विधान, जिसके अनुसार लोगों पर शासन होगा, उनकी इच्छा के विरुद्ध लागू किया जाये।

इस प्रस्ताव में मौलिक अधिकारों का भी उल्लेख है, हम एक सामाजिक व आर्थिक क्रांति करने का प्रयत्न कर रहे हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इस पार्थिक स्थिति को समुन्नत बनाने के अतिरिक्त हमें मनुष्य के अन्त:करण की स्वतंत्रता की भी रक्षा करनी है। जब तक कि स्वतंत्रता की भावना उत्पन्न न की जाये केवल स्वतंत्रता की दशाओं को पैदा करने से कोई लाभ न होगा। मनुष्य के मस्तिष्क को अपना विकास करने और पूर्णावस्था प्राप्त करने की पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिए। मनुष्य की उन्नति उसके मस्तिष्क की क्रीड़ा से ही होती है। वह कभी सृजन करता है तो कभी विनाश और उसमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। हमें मनुष्य के अन्त:करण की स्वतंत्रता की सुरक्षा करनी है जिससे उसमें राज्य हस्तक्षेप न कर सके। आर्थिक दशाओं के सुधार के लिए आवश्यक है कि राज्य-व्यवस्था करें लेकिन इससे मनुष्य के अन्त:करण की हत्या न होनी चाहिए।

हम आज एक महान् ऐतिहासिक नाटक के पात्रों के रूप में काम कर रहे हैं। चूंकि हम उसके अन्दर काम कर रहे हैं इसलिए हमें उसकी वृहद रूप-रेखा का ज्ञान नहीं हो सकता। जो घोषणा आज हम कर रहे हैं वह वास्तव में अपने

[सर एस. राधाकृष्णन]

लोगों से एक प्रतिज्ञा और सभ्य संसार से एक संधि है।

मि. चर्चिल ने मि. ऐलेक्जेंडर से यह सवाल पूछा कि क्या यह असेम्बली प्रमाणिक रूप से काम कर रही है? मि. एलेक्जेंडर ने कहा कि:

> ''मैं यह फिर कहता हूं कि विधान-परिषद् के लिए चुनाव की जो योजना थी, उसका कार्य समाप्त हो चुका है। यदि मुस्लिम लीग ने उसमें जाना स्वीकार नहीं किया तो आप एक नियमानुसार निर्वाचन असेम्बली को अपना कार्य करने से कैसे रोक सकते हैं?''

मि. ऐलेक्जेंडर ने यह कहा। समूह बन्दी की व्याख्या के सम्बन्ध में कुछ कठिनाइयां हुईं। बहुत कुछ इच्छा न होते हुए भी कांग्रेस ने श्रीमान्, सम्राट की सरकार की व्याख्या स्वीकार कर ली है। जो दो खंड रह जाते हैं उनसे अल्पसंख्यकों के हितों की पर्याप्त सुरक्षा हो जाती है और शक्ति हस्तान्तरित होने पर जो प्रश्न उठेंगे उनको हल करने के लिए उनका महत्व वही होगा जो एक संधि का होता। विधान-परिषद् न्यायोचित रूप से काम कर रही है। सरकारी योजना का हर एक भाग पूर्णतया स्वीकार कर लिया गया है, और यदि हम अल्पसंख्यकों के हितों की पर्याप्त सुरक्षा की व्यवस्था कर सकेंगे—ऐसी सुरक्षा जिससे चाहे अंग्रेजों को या हमारे देशवासियों को संतोष हो या न हो परन्तु जिससे सभ्य संसार के अन्त:करण को संतोष होगा तो, यद्यपि अंग्रेजों को ही उसे प्रयोग में लाने का अधिकार होगा, उन्हें कम से कम इस विधान को कानून का रूप देना ही होगा। यह आवश्यक है कि वे ऐसा करें, यदि इन शर्तों के पूरा होने पर भी हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता को स्थगित करने के लिए कोई बहाना ढूंढा जाये तो यह इतिहास में सबसे कठोर विश्वासघात का उदाहरण होगा। लेकिन इसके विपरीत यदि अंग्रेज यह तर्क दें कि विधान-परिषद् ने मंत्रिमंडल की योजना के आधार पर काम शुरू किया है और उसने 16 मई की मंत्रिमंडल की योजना के हर एक खंड को स्वीकार कर लिया है और सभी अल्पसंख्यकों की पर्याप्त सुरक्षा के लिए व्यवस्था कर दी है और इसलिए उन्हें इस विधान को प्रयोग में लाना चाहिए, तो यह इतिहास की एक सफलता होगी और इससे दो महान राष्ट्रों के बीच सहयोग और उनमें सद्भावना होगी। मि. एटली ने प्रधानमंत्री की हैसियत से 15 मार्च को जो भाषण दिया, उसमें उन्होंने कहा:—

> ''एशिया ऐसे विशाल देश में, युद्ध द्वारा विध्वस्त एशिया में, एक ऐसा देश जो प्रजातंत्र के सिद्धांतों को प्रयोग में लाने की चेष्टा करता रहा है। हमेशा ही मेरा अपना अनुभव यह रहा है कि राजनैतिक भारत एशिया का ज्योति हो सकता है। एशिया का ही नहीं वरन् संसार की ज्योति हो सकता है और उसके विभ्रान्त मस्तिष्क में एक आन्तरिक कल्पना जागृत कर सकता है और उसकी विचलित बुद्धि को उन्नति का मार्ग दिखा सकता है।''

ये दो उपाय हैं, विधान-परिषद् को स्वीकार कीजिये उसके नियमों को स्वीकार कीजिये, देखिए कि अल्पसंख्यकों के हितों की पर्याप्त सुरक्षा की गई है या नहीं। यदि की गई है तो उन्हें कानून का रूप दीजिये। इससे आपको सहयोग मिलेगा।

यदि सभी शर्तों के पूरा होने पर आप यह दिखाने की कोशिश करें कि कुछ बातें रह गई हैं तो यह समझा जायेगा कि अंग्रेज सारी सरकारी योजना की भावना के प्रतिकूल जा रहे हैं और संसार की वर्तमान परिस्थिति में इसका इतना भयंकर परिणाम होगा कि मैं उसकी कल्पना भी नहीं करना चाहता।

***श्री एन.वी. गाडगिल** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, माननीय पं. जवाहर लाल नेहरू ने जो प्रस्ताव पेश किया है उसका समर्थन करने में मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। बहस में बताया गया था कि यह विधान-परिषद् इस प्रकार के प्रस्ताव पास करने की क्षमता नहीं रखती। इस सम्बन्ध में मैं आदरपूर्वक सभा का ध्यान मंत्रिमंडल के वक्तव्य के पहले पैरे की ओर दिलाना चाहता हूं जिसमें ब्रिटिश प्रधानमंत्री मि. एटली के भाषण का उद्धरण किया गया है। वह कहते हैं:—

''मेरे साथी इस इरादे से भारत जा रहे हैं कि वे उस देश को शीघ्रातिशीघ्र पूरी आजादी दिलाने की कोशिश करें। यह निश्चय करें कि भारत के वर्तमान शासन के स्थान में कौन से ढंग का शासन स्थापित हो सकता है; किन्तु इच्छा यही है कि भारत को शीघ्र ही इस काम में मदद दें जिससे वह इसका निश्चय करने के लिए उचित व्यवस्था कर सके।

यह तो स्पष्ट है महाशय, कि यह असेम्बली न के शासन का स्वरूप विकसित करने के लिए है बल्कि उसके विवरण को भी तैयार कर देने के लिए है। मैं यहां यह कह देना चाहता हूं कि हम यहां विधान का मसविदा बनाने या तर्क वितर्क करने के लिए नहीं हैं। वास्तव में हम यहां कार्यकारिणी के रूप में इकट्ठे हुए हैं और विधान-परिषद् की यह सभा स्वतंत्रता के संघर्ष की एक मंजिल हैं शायद यह अन्तिम से पहले का या अन्तिम संघर्ष होगा। जिसके साथ इस स्वातंत्र्य-युद्ध का अन्त होगा जो गत 75 वर्ष या उससे अधिक से पीढ़ी दर-पीढ़ी चल रहा है। हमारे पूर्ववर्ती लोगों ने हमें संघर्ष की परम्परा सौंपी है; पर मुझे आशा है कि जब हमारी वर्तमान पीढ़ी समाप्त हो जायेगी, तो वह बाद में आने वाली पीड़ी को संघर्ष की परम्परा नहीं सौंपेगी; वह ऐसे रचनात्मक प्रयत्न की परम्परा छोड़ जायेगी जिसके द्वारा भारत के भावी समाज का निर्माण होगा।

महोदय, उद्देश्य की परिभाषा बताने की आवश्यकता स्पष्ट है। भूतकाल में जिन लोगों ने इस संघर्ष में योग दिया है वे इने-गिने प्रोफेसर और प्रिवी कौंसिलर नहीं थे, बल्कि वे ऐसे लोग थे जो दरिद्रता में पसीने बहाते रहे हैं और अज्ञान में दबे रहे हैं। उन्हें यह जानना चाहिए कि वे इतने दिनों से किस ध्येय के लिए लड़ते रहे हैं और अन्ततः यदि हमारा बनाया विधान ब्रिटिश सरकार को स्वीकार न हुआ तो उन्हें किसके लिए लड़ना होगा अब इस प्रस्ताव में मैं देखता हूं कि कोई भी ऐसी बात नहीं है, जिसके प्रति कोई भी व्यक्ति या दल जो स्वतंत्रता चाहता है, आपत्ति कर सकता है। पहली बात तो यह है कि हमारे ध्येय की परिभाषा की गई है, स्वतंत्र सर्वोच्च प्रजातंत्र। जहां तक मैं जानता हूं कि मुस्लिम लीग ने गत छः वर्षों में जितने प्रस्ताव पास किए हैं उनमें उसने अपना ध्येय गणतंत्रात्मक स्वतंत्रता ही प्रकट किया है। वास्तव में आज जो इस्लामी मुल्क इस्लामी दुनिया का नेतृत्व कर रहा है वह तुर्की भी प्रजातंत्र राज्य है। इसलिये मुस्लिम लीग को हमारे इस ध्येय में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। अतएव हमें देखना चाहिए

[श्री एन.वी. गाडगिल]

कि इस प्रस्ताव में क्या गुण हैं, और यदि यह बताया जा सके कि कोई बात आपत्तिजनक है, तो उसको तब समन्वित किया जा सकता है जब आपत्ति करने वाले यहां होंगे। पर जहां तक मैं देख पाता हूं मुझे कोई शब्दावली, कोई प्रस्ताव खंड ऐसा नहीं दीखता जिस पर आपत्ति की जा सकती हो।

इस प्रस्ताव के विभिन्न उप-पैराग्राफो—को लेने पर हम एक मुख्य बात सब जगह व्यवस्थित पाते हैं और वह है राष्ट्र की एकता या संयुक्तता। साथ ही सब प्रान्तों के विकास और वृद्धि की गुंजाइश है और कोई ऐसी बात नहीं रखी गई है जिससे किसी प्रान्त को अपने ध्येय तक पहुंचने में रुकावट हो और सभी का ध्येय सामान्य और पारस्परिक बाध्यता के अनुरूप होगा। साथ ही मैं यह भी बता देना चाहता हूं कि इससे वह क्षेत्र प्राप्त हो जाता है जिसमें ऊँची राजनीति, ऊंची विद्वता, अच्छे व्यापार और बड़े उद्योग शिल्प के लिए ज्यादा गुंजाइश है। अगर इस प्रकार का संयुक्त राज्य होता है तो राजनैतिक सुरक्षा बढ़ जाती है और आर्थिक दृष्टि से उसमें संयुक्त राज्य में क्रय-विक्रय की शक्ति भी अधिक बढ़ जाती है। चाहे जिस दृष्टि से देखिए ऐसे राष्ट्र की जिसके सभी भौगोलिक खंड सम्मिलित हों और जिसका भारत नाम हो, सभी प्रान्तों के लिए आवश्यकता है और प्रत्येक वैधानिक राष्ट्र के लिए भी जो ऐसा संयुक्त राज्य में सन्निहित होगा इसकी आवश्यकता होगी। इसमें सम्मिलित होकर वे प्रान्त कुछ खोयेंगे नहीं और मेरी तुच्छ सम्मति में तो उन्हें बहुत कुछ लाभ ही होगा।

महोदय, इस प्रस्ताव में मौलिक अधिकार भी रखे गये हैं और जन साधारण इसके लिए इच्छुक हैं। यह अधिकार उन्हें मिलने-जुलने, भाषण करने तथा वे सभी प्रकार की नागरिक स्वतंत्रता प्रदान करता है जो स्वतंत्र राष्ट्रों के विधान में है। कुछ आपत्तियां इस बात पर की गई थीं कि बहुत-सी बातें स्पष्ट नहीं हैं। पर यह साफ बात है कि सभी बातें इस तरह के प्रस्ताव में सम्मिलित नहीं की जा सकती हैं पर यदि मौलिक अधिकारों के बारे में रखे गये अंशों को ध्यानपूर्वक देखा जाये तो उसमें आर्थिक न्याय की व्यवस्था है जो तभी हो सकता है जब देश का उत्पादन समाज के हाथ में आ जाये। व्यक्तिगत उद्योग-धंधे भी रह सकते हैं, पर उनका क्षेत्र सीमित होगा। यदि आर्थिक न्याय प्राप्त करना है तो वह तभी प्राप्त हो सकता है जब उत्पादन के साधन राष्ट्र के हाथों में आ जायें। इसलिये अगर आज सब बातें बिल्कुल स्पष्ट नहीं दिखाई दे रही हैं तो मुझे निश्चय है कि जब यह सिद्धान्त विधान के अंगों में सम्मिलित कर लिये जायेंगे तो सब बातें पूर्णतः स्पष्ट हो जायेंगी।

महोदय, यह एक प्रकार का भवन है—सारा प्रस्ताव इस सभा-भवन के समान ही संयुक्त है। इसका गुम्बद मेहराबों पर टिका हुआ है। इसी प्रकार प्रस्तावित स्वतंत्रता भी अनेक सिद्धान्तों की मेहराबों पर आधारित है जो प्रस्ताव में सम्मिलित हैं और जिन्होंने सारे ढांचे को सन्तुलन के रूप में शक्ति दे रखी है। जैसा कि मैंने कहा है यह प्रस्ताव अत्यन्त महत्व का है और यद्यपि यह मौलिक रूप में उस विधान का अंग नहीं बन सकता, जो अन्त में निर्मित होगा, पर यह एक प्रकार की आध्यात्मिक भूमिका है जो प्रत्येक धारा में, प्रत्येक खंड में और हर सूची में प्रस्तुत मिलेगा और जैसा कि मैं कह चुका हूं यह आवश्यक है। यह एक प्रकार की

संचालित शक्ति होगी जिसे वही प्राप्त कर सकेंगे जो विधान को विस्तृत रूप में निर्मित्त करने वाले होंगे। वास्तव में यह एक नींव है। लोगों को मालूम हो जायेगा कि उन्हें क्या मिलने वाला है। यह ऐसा विधान होगा जो उन नागरिकों में वफादारी की भावना जाग्रत करेगा, जिन पर वह लागू किया जाने वाला है। क्योंकि जब तक कोई विधान नागरिकों को अपने प्राण देकर भी अपने अधिकारों की रक्षा करने के लिए प्ररेणा नहीं प्रदान करता तब तक वह उनकी वफादारी नहीं प्राप्त कर सकता।

महोदय, जैसा कि मैंने कहा है यह असेम्बली ऐसी नहीं है जहां हम केवल विधान का मसविदा मात्र बनाने के लिए इकट्ठे हुए हों; यह तो एक प्रकार की कार्यकारिणी है। हम यहां इसलिए हैं कि जनता ने संघर्ष चलाया है और हमें विधान तैयार करना है। अगर वह विधान तैयार कर लिया जाता है और उसकी स्वीकृति नहीं मिलती तो जनता पूछेगी कि उसका अनुमोदन क्या हुआ? उनके लिए मेरा यह नम्र जवाब है कि अनुमोदन दो प्रकार के हैं—एक नैतिक और दूसरा भौतिक। यदि हमारा विधान न्याययुक्त और देश के सभी हितों के लिए उपयुक्त है तो सबसे बड़ा अनुमोदन तो यही होगा, और दूसरा अनुमोदन है जनता की यह दृढ़ इच्छा कि वह जिस प्रकार की भी सरकार प्राप्त करने का निश्चय करती है वह मिल जाती है। और यदि वह किसी शक्ति द्वारा नहीं दी जाती, तो वह दृढ़ता की भावना केवल बौद्धिक नहीं रह जायेगी; बल्कि वह ठोस रूप में काम करेगी, यद्यपि उसका निश्चित स्वरूप आज नहीं बताया जा सकता। मेरा निवेदन है कि ज्यों-ज्यों विधान-निर्माण का काम खंडशः आगे बढ़ेगा और एक-एक धारा और अंग पर विचार होगा, तो लोगों को स्वयं मालूम हो जायेगा कि क्या हो रहा है और मेरा तो विश्वास है महोदय कि क्रान्ति के लिए आवश्यक मनोवृत्ति वर्द्धित होकर उपयोग के लिए प्रस्तुत हो जायेगी। मेरा निवेदन है कि हम विधान के खंड-खंड को लेकर ज्यों-ज्यों आगे बढ़ेंगे, इस देश में ब्रिटिश शक्ति सूखती जायेगी और जब तक हम अपनी सूची के अन्त तक पहुंचेंगे, हम देखेंगे कि जहां तक भारत का सम्बन्ध है ब्रिटिश राज्य लुप्त हो चुका है। तब केवल ब्रिटिश शक्ति की विधि-विहित विदाई ही बाकी रह जायेगी, क्योंकि हम क्या स्पष्ट नहीं देख रहे हैं कि जिन्होंने भारत पर दमन, नृशंसता पूर्ण दमन और असामान्य कानूनों और आर्डिनेन्सों से राज्य किया था, उनके दिन लद गये हैं वे चित्र कहां गये? वह सब उड़ गये। यह बात अब दीवार पर की गयी लिखावट की तरह साफ और स्पष्ट दीख रही है। अध्यक्ष महोदय, यह बतलाया गया है कि अंग्रेज भारत छोड़ने के लिए बहुत आतुर हैं। वास्तव में बहुत दिनों पहले ही मेकाले लिख गया था कि ब्रिटेन के लिए वह गौरवपूर्ण दिन होगा जब हिन्दुस्तानी अंग्रेजों से यह कह देंगे कि अब तुम हमारा देश खाली कर दो। हम तो उन्हें कितने दिनों से जाने के लिए कह रहे हैं। पर जो कुछ लार्ड मेकाले ने कहा या उसके सिवा जो साम्राज्य क्लाइव और हेस्टिंग्स के कपट और जाल से बना था और जो लगातार झूठे वादों पर कायम रहा और अब भी कूटनीतिक घोषणाओं के अनुसार जारी रखा जा रहा है और प्रवाहपूर्ण एवं लचीली सफाइयों के आधार पर टिकाया जा रहा है; वह अब समाप्त होना ही चाहिए। इस प्रकार की सफाई अब इस साम्राज्य को एक दिन भी अधिक नहीं टिकने दे सकती। अब तो उस जनता के हक में सब शक्तियां सौंप दी जानी चाहिए जिसने विदेशी-शासन में इतने लंबे समय तक घोर कष्ट सहन किये हैं अब वह दिन आना ही चाहिए जब उन्हें अपना

[श्री एन.वी. गाडगिल]

सब कुछ प्राप्त हो जाये। यदि सत्ता सौंपने की क्रिया शान्तिपूर्वक होती है तो अच्छा ही है, पर यदि शान्ति के साथ न हुई और यदि संघर्ष अनिवार्य हो गया, और इतिहास का तकाजा है कि ऐसा संघर्ष होना ही चाहिए तो मैं इतना ही कह सकता हूं कि हम तो लड़ना नहीं चाहते, पर अगर हमें लड़ना ही पड़ा तो हमारे पास आदमी भी हैं, साधन भी हैं और मस्तिष्क भी। पर ऐसा हुआ तो क्या होगा? अंग्रेज जायेंगे—पूरे तौर से अपना सब कुछ लेकर जायेंगे। उनके स्टाक और शेयर्स दुकान और कारखाने सब जायेंगे, वह कुछ भी पीछे न छोड़ सकेंगे—कोई शुभेच्छा या सुस्मृति भी नहीं। उनका व्यापार और झंडा दोनों इस देश से गायब हो जायेगा। अब यह उन पर निर्भर है कि वे इस बात का निश्चय करें कि वे अपने इस महान् आदर्श के अनुसार चलेंगे जो लार्ड मेकाले कह गये थे, या वे अब भी चिपके रहकर अपनी वह अन्तिम दुर्दशा देखना चाहते हैं जिसका वर्णन मैंने अभी किया है।

अध्यक्ष महोदय, अब हम उस स्थिति को पहुँच गये हैं जब यह आवश्यक हो गया है कि हम स्पष्ट रूप में कह दें कि हम क्या चाहते हैं। हमें कहा गया है कि अन्य प्रश्न—जैसे अल्पसंख्यकों आदि के भी तो हैं—जिनका सुलझाना मुश्किल है। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि यह समस्या तो विदेशी शक्ति की सृष्टि है। प्रयाग के संगम के बाद कोई गंगा और यमुना के जल को साथ बहने से नहीं रोक सका। (*हर्ष ध्वनि*) क्योंकि वहां तीन नदियां, गंगा, यमुना और सरस्वती (बुद्धिमानी) मिल जाती हैं और फिर उसके बाद गंगा-यमुना के पानी को पृथक रूप में पहचाना नहीं जा सकता। समय आ गया है जब दोनों सम्प्रदायों को अक्ल आयेगी और परिणाम यह होगा कि वह एक ऊंची एकता स्थापित करेंगे, एक ऊंचा संयोग कायम करेंगे जिसमें सभी को जीवन और व्यक्तित्व को उच्चतम श्रेणी पर पहुंचाने का अवसर मिलेगा। कहा जाता है कि हम जो कुछ चाहते हैं वह निकट भविष्य में प्राप्त होने वाला नहीं है। संघर्ष चाहे छोटा हो या बड़ा—थोड़े समय का हो या लम्बा, यद्यपि हम उसका आह्वान नहीं करना चाहते—पर अगर वह आया तो हमें उसके लिए तैयार रहना चाहिए। जो प्रतिनिधि यहां एकत्रित हुए हैं उन पर जो कार्य-भार डाला गया है, वह महान् और ऐतिहासिक है। मुझे सन्देह नहीं है कि वे इस अवसर का सदुपयोग करेंगे और इस प्राचीन देश को स्वतन्त्रता के ध्येय तक पहुँचायेंगे। ऐसे समाज की रचना करेंगे जिसमें मनुष्य की कद्र उसकी सम्पत्ति से नहीं, उसके गुणों से होगी, जिसमें मनुष्य का चरित्र ही उसकी कसौटी होगा, रुपये-पैसे नहीं; जिसमें गर्व को तिलांजलि दी जा चुकी होगी और ईर्ष्या जिह्वा से न निकल सकेगी; जिसमें पुरुष और स्त्री अपना मस्तष्क ऊंचा करके चलेंगे; जहां सब सुखी होंगे क्योंकि सभी समान होंगे, जिसमें धर्म युद्ध-क्षेत्र नहीं होंगे, क्योंकि सभी कर्तव्य की देवी के उपासक होंगे, जिसमें जाति का अभिमान भी नहीं होगा और जाति की हीनता-जनित लज्जा भी, क्योंकि सभी एक जाति के अर्थात् कार्यकर्ताओं की जाति के होंगे, जहां सिद्धान्त मनुष्य को मनुष्य से पृथक् न करेंगे क्योंकि उनका सिद्धांत तो सबकी सेवा करना होगा, जहां स्वतंत्रता और सम्पन्नता प्राप्त होगी, क्योंकि किसी को शक्ति या समृद्धि का एकाधिकार नहीं प्राप्त होगा। सभी सुखी होंगे क्योंकि सभी समान होंगे। इसमें सन्देह नहीं कि यह एक स्वप्न है, पर उद्देश्य और ध्येय-पूर्ण जीवन के लिए स्वप्न

आवश्यक है। यह न हुआ तो मनुष्य का जीवन कौवे के समान हो जायेगा—

'काकोपि जीवित चिरायः
बालिमथा भुंकते।'

अर्थात् टुकड़ों पर तो कौआ भी बहुत दिन जीवित रहता है।

हम इस तरह का जीवन नहीं चाहते। निस्सन्देह यह एक स्वप्न है। पर मैं अन्त में यही कहूंगा कि जब तक हम ऐसे स्वप्न न देखेंगे तब तक आगे नहीं बढ़ सकते, क्योंकि जो जाति स्वप्न नहीं देखती वह नष्ट हो जाती है। (*हर्ष ध्वनि*)

माननीया विजयलक्ष्मी पंडितः (संयुक्तप्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, सन् 1937 ई. प्रांतीय स्वायत शासन के समारम्भ के बाद मुझे अपने प्रांत में पहला प्रस्ताव पेश करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था जिसके द्वारा स्वतन्त्र भारत का विधान बनाने के लिए विधान-परिषद् की स्थापना की मांग की गई थी। आज दस वर्ष बाद वह विधान-परिषद् यहां सम्मिलित हो रही है। यह स्वतंत्रता के मार्ग में एक ऐतिहासिक स्तम्भ है। फिर भी स्वतंत्रता एक पहुंचने में अभी कुछ कसर रह ही गयी है। साम्राज्यवाद बड़ी कठिनाई से मरता है, यद्यपि वह जानता है कि अब उसके दिन ढल गये हैं, फिर भी वह जीवित रहने के लिए संघर्ष कर रहा है। बर्मा, इंडोनेशिया और इंडोचीन में जो कुछ हो रहा है, वह हमारे सामने है—लोग स्वतंत्र होने के लिए जी-जान से जुट पड़े हैं फिर भी साम्राज्यवाद का पाया ऐसा मजबूत है कि वे उसे आसानी से उखाड़ सकने में समर्थ नहीं हो रहे हैं। हर देश में प्रतिक्रियावादी जमा हो रहे हैं और वह अपनी रक्षा के बहाने साम्राज्यवादी शक्ति से चिपट कर उसकी शक्ति बढ़ा रहे हैं। हमने संयुक्त राष्ट्र-संघ के जन्म के समय सेनफ्रांसिस्को का दुःखद दृश्य देखा है। जो एशियाई राष्ट्र वहां एकत्रित हुए उन पर साम्राज्यवादियों का प्रभाव था, इसलिए वे स्वतन्त्र रूप में कुछ नहीं बोल सकते थे—केवल अपने देश की साम्राज्य शक्ति से सुर में सुर मिला रहे थे। उसका परिणाम यह देख लिया गया कि यद्यपि घोषणा-पत्र के शब्द वीरतापूर्ण थे, पर उसे क्रियात्मक रूप देने की नौबत नहीं आयी, क्योंकि उसके पीछे काफी ताकत नहीं थी। एशिया के लोग चुप रहे और उन्होंने उस घोषणा-पत्र के शब्दों को क्रियात्मक रूप देने का हठ नहीं किया। आज भी एशिया संयुक्त राष्ट्र परिषद् में यूरोप की अपेक्षा बहुत कम प्रतिनिधि भेज सका है और शायद इतिहास में यह पहला ही अवसर है कि संयुक्त राष्ट्र परिषद् के गत अधिवेशन में स्वयं स्वतन्त्र न होकर भी एक देश अपनी आवाज उठा सका और सारे संसार की स्वतन्त्रता और पद्दलित एवं गुलाम प्रजाजन के उद्धार के लिए बोल सका (*हर्ष ध्वनि*)। संयुक्त राष्ट्र परिषद् ने इसे स्वीकार इसलिए किया कि भारत ने इस समय भी संसार का नेतृत्व करने की शक्ति दिखा दी है। इसमें सन्देह नहीं कि स्वतन्त्र भारत एशिया का ही नहीं—सारे संसार का नेतृत्व करेगा।

और जब हम अपने देश का शासन-विधान बनाने के लिए अपनी इस असेम्बली में एकत्रित हो रहे हैं, तो हमें भूल नहीं जाना चाहिए कि हमारा कर्तव्य केवल अपने लिए नहीं, सारे संसार के लिए है जो हमारी ओर देख रहा है।

हमारे सामने जो प्रस्ताव रखा गया है वह पूर्ण व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर जोर देता है और प्रत्येक वैध दल को भी पूर्ण स्वतन्त्रता का आश्वासन देता है। इसलिए

[माननीया श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित]

उसमें अल्पसंख्यकों के भय करने का कोई कारण नहीं है। यद्यपि कुछ अल्पसंख्यकों को विशेष हित-रक्षा की आवश्यकता है, पर उन्हें भूलना नहीं चाहिए कि वे एक पूरे राष्ट्र के अंग हैं और यदि बड़ी वस्तु को नुकसान पहुँचता है तो उसके अंग—अल्पसंख्यकों के हितों—की रक्षा का सवाल ही नहीं उठ सकता। स्वतन्त्र भारत में अल्पसंख्यकों को बाहरी शक्ति का मुंह नहीं ताकना पड़ेगा और वे ऐसी मदद ढूंढेंगे तो उन्हें कोई 'धोखेबाज' कहे बिना नहीं रहेगा। इधर कई वर्षों से हम अधिकार की बातें बहुत कर रहे हैं और कर्तव्य की कम। किसी भी समस्या का इस तरह का समाधान करना एक दुर्भाग्य की बात होती है। हमारे सामने जो प्रस्ताव है वह ऐसी समस्याओं से सम्बन्ध रखता है जो हम सभी के लिए बुनियादी है और हम किसी विशेष अल्पसंख्यक जाति की रक्षा उसी हद तक कर सकते हैं जिस हद तक कि वे समस्याएं हल हों। प्रस्ताव में स्पष्ट कहा गया है कि स्वतन्त्र भारत में व्यक्ति और समूह को पूरी सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता होगी और हम अपने जीवन के नमूने के द्वारा अन्य राष्ट्रों के सामने आदर्श रख सकेंगे। ऐसी दशा में हमारे अपने जीवन का नमूना दुरुस्त होना चाहिए और वह सारे देश के सहयोग और उसकी शक्ति के द्वारा निश्चित होना चाहिए।

सभी एशियाई देशों में युगों से भारत ही प्रजातन्त्र के पक्ष में रहा है। हमारे सारे बहुरंगी इतिहास में यही होता आया है कि लोकमत की विजय के लिए हमने सदा संघर्ष किया है। इधर हाल के वर्षों में बहुत बड़े संकट में पड़कर और व्यक्तिगत त्याग द्वारा इस देश के लोग प्रजातंत्र के सिद्धांत पर डटे रहे हैं और आज हम दुनिया को यह दिखाने की स्थिति में हैं कि हम अपने आदर्श को कार्य रूप में परिणत कर सकते हैं। जिस प्रस्ताव पर विचार हो रहा है वह विषय और शब्दों में काफी स्पष्ट है; फिर भी मैं दो बातों पर जोर दूंगी।

हमारे सामने दो पहलू है—सक्रिय और निष्क्रिय। पहलू का संबंध देश से साम्राज्यवादी प्रभुत्व का नाश करने से है जिससे हम सभी सहमत हैं। पर सवाल का सक्रिय पहलू ही अधिक महत्वपूर्ण है जिसके अनुसार हमें अपने देश में समाज सत्तावादी प्रजातंत्र राज्य की स्थापना करना है जिससे भारत अपने ध्येय को प्राप्त कर संसार को स्थायी शान्ति का मार्ग दिखा सके। हमारे राष्ट्रीय इतिहास के इस अवसर पर हम अपनी शक्ति ऐसी बातचीत और कामों में नहीं गंवा सकते जिससे हमारे ध्येय की पूर्ति में बाधा पड़ती हो। न हमें अविवेकपूर्ण ऐसे भय ही होना चाहिए। हमें जो चुनौती दी गई है उसे ही स्वीकार करना चाहिए और इस चित्र के सक्रिय पहलू को प्राप्त करने के लिए साथ-साथ आगे बढ़ना चाहिए।

युद्ध की समाप्ति ने कई समस्याएं पैदा कर दी हैं जो स्वयं तो कठिन हैं हीं लेकिन समष्टि के सामने व्यक्ति की मांगों को रखने से वे और भी पेचीदा हो गई हैं बहुत से राष्ट्र अब तक पराधीन होने के कारण न तो इसके समर्थन में ही आवाज उठा सकते हैं न विरोध में ही। किन्तु वर्तमान समस्याओं को सुलझाने के लिए भारत अब भी बहुत कुछ कर सकता है और संसार में शान्ति और सुरक्षा कायम रखने में भी अपना योग दे सकता है स्वतंत्र भारत उन्नति की शक्तियों के लिए एक ताकत बन जायेगा। संयुक्त संसार निर्माण करने के इस युग में हम पृथक राष्ट्रों की बात नहीं कर सकते। हमें एक दुनिया बनाने के

लिए काम करना है—वह दुनिया जिसमें हिन्दुस्तान एक योग्य हिस्सेदार होगा भारत को नेतृत्व करने का अधिकार है। क्योंकि उसकी परम्परा ही ऐसी है और उसका वर्तमान भी ऐसा है कि अपनी समस्याओं की पेचीदगियों के होते हुए भी वह खड़ा है और उसने अपने आदर्शों की कद्र की है और उन्हें खो नहीं दिया है। भविष्य के लिए हमारी एक देन यह है कि राजनीतिक और सामाजिक असन्तोष का हमने अन्त किया है और उसके लिए हमें अपने देश में स्वतन्त्रता स्थापित कर उन सबके सहायक बनना दुनिया को आजाद कराने का प्रयत्न कर रहे हैं। जब तक एशिया अपने वास्तविक स्वरूप को नहीं प्राप्त कर लेता तब तक संसार एक होकर नहीं चल सकता। जो संसार समूहों में विभाजित है वह सुरक्षित नहीं रह सकता एक विख्यात अमेरिकन ने कहा है—''कोई भी राष्ट्र आधा गुलाम और आधा स्वतन्त्र नहीं रह सकता। यही बात दुनिया के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है, क्योंकि आजादी का विभाजन नहीं हो सकता। हिन्दुस्तान सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से अपने को आजाद कर ले तभी वह औरों को भी आजाद कर सकता है। और इस समय हमारे सामने जो प्रस्ताव है उसमें हम इस ध्येय की पूर्ति का प्रयत्न पाते हैं। इसके द्वारा हम उस प्रतिज्ञा को फिर करते हैं जो हमने कर रखी है। मैं सभा के सदस्यों से प्रार्थना करती हूं कि वे इस प्रस्ताव को पास करें और यह दिखा दें कि उनका प्राचीन देश अच्छी तरह जानता है कि उसको चुनौती दी गई है और वह अपने भूतकालीन आदर्शों और परम्पराओं का पालन कर सकता है।

***प्रोफेसर एन.जी. रंगा** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय तथा मित्रों, मुझे इस प्रस्ताव का समर्थन करने में असीम प्रसन्नता हो रही है इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे इससे पूर्ण सन्तोष है, फिर भी जहां तक इस प्रस्ताव का सम्बन्ध है, यह हमारे सामने भविष्य के लिये बड़ा ही प्रभावपूर्ण, विस्तृत और उदार विचार रखता है जिसकी ओर हमारे लोगों की दृष्टि है। लेकिन यह शर्त है कि एक बार हमारा नया विधान अस्तित्व में आ जाये। पर यह केवल उदार विचार मात्र नहीं है, क्योंकि वह केवल ऊंचे आदर्श और श्रेष्ठ विचार ही हमारे लोगों के सामने रखकर संतोष नहीं कर लेता। यह (प्रस्ताव) इस बात की जरूरत पर भी विचार करता है कि हमारी जनता को इसमें लिखित अधिकारों के उपभोग का आश्वासन दिया जाये, और इस रूप में यह प्रस्ताव, इस प्रकार के उन अन्य प्रस्तावों से कहीं आगे बढ़ जाता है जो संसार के विधानों में इसी प्रकार के विचारों को लेकर रखे गये थे।

एक और बात में भी यह प्रस्ताव और सभी प्रस्तावों से बहुत आगे बढ़ गया है। जब कि अन्य देशों के विधानों में जनता को विशेष रूप से यह आश्वासन नहीं दिया गया है कि उन्हें उनके आदर्श और ध्येय की प्राप्ति के लिए स्वातंत्र्य प्रदान किया जायेगा। इस प्रस्ताव में यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी गई है कि हमारी जनता को जब कभी आवश्यक प्रतीत हुआ—कानून और नैतिक मापदंड की अनुकूलता की दशा में—कार्य स्वातंत्र्य प्राप्त होगा। यह बड़ा ही महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि समय-समय पर इस देश तथा अन्य देशों में भी सरकार जनता के इस अधिकार को नहीं मान सकती थी कि वह चाहे तो किसी खास कानून आर्डिनेंस और अपनी सरकार की मनमानी आज्ञा के विरुद्ध विद्रोह कर सकते हैं। सरकारें तो प्रजा को धमकी देकर कहा करती थीं कि उन्हें स्थापित कानून के विरुद्ध जाने का कोई अधिकार नहीं है। किन्तु महोदय, जब अन्य देशों के राजनीतिक तत्वज्ञानी संतुष्ट थे तो हैरोल्ड लॉस्की जैसे तत्वज्ञानी जनता को सावधान कर रहे थे कि वह अपने अधिकारों

[प्रोफेसर एन.जी. रंगा]

की रक्षा के लिये तैयार रहें, कर्तव्य के लिए प्रस्तुत रहें और नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए सन्नद्ध रहें। ऐसे समय पर केवल भारत में ही ऐसा अवसर मिला है—जिसका श्रेय महात्मा गांधी के नेतृत्व को है और सत्याग्रह का वह अस्त्र हमें मिला जिसे सामूहिक रूप में भी काम लेकर संगठित या असंगठित जनता अपने अधिकारों का प्रदर्शन कर सकती है और व्यक्तिगत रूप में भी उसका प्रयोग कर सकती है। हमने बार-बार अपने अधिकारों को दुहराने और अन्याय के विरुद्ध खड़े होने के लिये जोर देकर कानून या कानून के समूहों की धज्जियां उड़ा दी हैं। हमने उस रूप में संसार को दिखा दिया है कि केवल इसी तरह हम नागरिक और व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा कर सकते हैं। राष्ट्र और व्यक्ति दोनों से गलतियां हो सकती हैं और उनकी गलतियों के विरुद्ध कोई रक्षा का उपाय होना चाहिए। यह उपाय सत्याग्रह के ही रूप में मिलेगा, इसलिए मैं ऊपर कहे गए कारण से भी प्रस्ताव का स्वागत करता हूं।

इस देश में अनेक लोग यह शिकायत करते सुने हैं कि अमुक दल तो इस असेम्बली में आया ही नहीं और फलां-फलां पार्टी तो इस असेम्बली के दायरे और उसके कार्य से दूर ही हैं, इसलिये हमें ऐसे प्रस्तावों पर विचार करने का अधिकार नहीं है। जिस असेम्बली में किसी परिवार की जायदाद बढ़ाने की बात चल रही हो क्या उसमें कुनवे के सभी लोगों का हाजिर होना जरूरी है? क्या किसी परिवार का कोई ऐसा भी सदस्य है जो अपने परिवार की साम्पत्तिक और नैतिक अभिवृद्धि का विरोधी हो और उस परिवार के अधिकार को ही न चाहता हो? और यह प्रस्ताव तो बस इसी प्रकार का है। हम यहां इसलिये एकत्रित हुए हैं कि इस देश के प्रत्येक व्यक्ति दल और सारे देश की शक्ति और कर्तव्य कैसे बढ़ाये जा सकते हैं। इस मौके पर अगर हम में से कुछ लोग इस सभा में नहीं आ सके हैं तो कोई हर्ज नहीं है। हो सकता है कि अनेक निजी कारणों से कोई पार्टी अभी दूर है, पर उससे हमें आगे बढ़ने से नहीं रुकना चाहिए। हमें अपनी परम्परा, अपने अधिकार और अपने देश की शक्ति बढ़ाने से नहीं रुकना चाहिए।

महोदय, साथ ही मैंने कहा कि यह काफी नहीं है और मैं इसके बारे में कुछ शब्द और कहना चाहूंगा। यह तो बहुत अच्छा है कि हम अपने-अपने गांव वापस जाकर लोगों और दोस्तों से कहें कि हमने ऐसा प्रस्ताव पास कर लिया है और भविष्य में उनके सभी अधिकार सुरक्षित रहेंगे और अब उन्हें कोई डर नहीं रहा है। पर क्या इतना ही काफी होगा कि लोगों को काम काज की सुविधा और मौलिक अधिकार मिल जाये? अगर उन्हें कह दिया जाये कि वे अपने सभा समितियों के जलसे कर सकेंगे और उन्हें सब तरह के नागरिक अधिकार मिल जायेंगे तो क्या वे खुश हो जायेंगे? क्या यह आवश्यक नहीं है कि जीवन में स्थिति ही ऐसी उत्पन्न कर दी जाये कि वह इन अधिकारों का आनन्द उठा सकें जो हम उनके लिए प्रस्तुत कर रहे हैं? वह एक तथ्य है और दु:खद तथ्य है महाशय, कि हमारे करोड़ों देश-भाई उन अधिकारों का उपभोग भी नहीं कर पा रहे हैं जो हम उनके लिए यहां तैयार कर रहे हैं और जो सुविधाएं उनके लिये खुली की जा रही हैं उनसे फायदा नहीं उठा रहे हैं। वे शिक्षित नहीं हैं। आर्थिक दृष्टि से वे पिछड़े हुए हैं उन्हें दबा दिया गया है। उन पर अत्याचार हुआ है। सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए और पद्दलित हैं। इन लोगों के लिए अब बहुत सी बातें करनी होंगी और कुछ समय तक करनी होंगी तब जाकर वे इन अधिकारों

का उपभोग करने योग्य बन पायेंगे। उनको सहारा देने की जरूरत है। उनके लिए सीढ़ी की जरूरत है जिसके द्वारा वह उस मंच तक पहुंच सकें जहां से वह इन अधिकारों का मूल्य समझ सकें इनकी कद्र कर सकें और इन अधिकारों का जो हम उनके सामने रख रहे हैं आनन्द भोग सकें।

महोदय, अल्पसंख्यकों के बारे में बहुत-कुछ कहा सुना जा रहा है। वास्तव में अल्पसंख्यक कौन हैं? तथाकथित पाकिस्तान प्रान्तों में हिन्दू अल्पसंख्यक नहीं हैं; और न सिख ही। यही नहीं हिन्दुस्तान में मुस्लिम भी अल्पसंख्यक नहीं हैं। असली अल्पसंख्यक इस देश का जनसमूह है। वह लोग ऐसे दबा दिये गये हैं, उन्हें ऐसा पददलित कर दिया गया है कि वह साधारण नागरिक अधिकार की सुविधाओं का उपभोग नहीं कर सकते। स्थिति क्या है? आप आदिवासियों के क्षेत्रों को जाइए। कानून के मुताबिक उनकी परम्परा के और उनके फिर्के के कानून के अनुसार उन्हें जमीन से बेदखल नहीं किया जा सकता, फिर भी व्यापारी वहां जाते हैं और उस नामधारी स्वतंत्र बाजार में उनकी जमीन छीन लेने में समर्थ हो जाते हैं। इस तरह यद्यपि कानून इस जमीन छीनने के विरुद्ध जाता है, फिर भी व्यापारी आदिवासियों को अनेक तरह के दस्तावेज लिखाकर सच्चा गुलाम और परम्परागत क्रीत दास बना लेते हैं। हमें साधारण गांव वालों के पास जाना चाहिए। महाजन वहीं अपने रुपये सहित पहुंचता है और गांव वालों को अपने वश में कर लेता है। वहां जमादार या मालगुजार भी तो हैं और कितने ही और ऐसे लोग हैं जो इन गरीब गांव वालों का शोषण करते हैं। इनमें आरम्भिक शिक्षा का भी प्रचार नहीं है। असली अल्पसंख्यक तो यह हैं जिनको रक्षा की जरूरत है और उसके आश्वासन की भी। उनकी आवश्यक रक्षा करने के लिए हमें इस प्रस्ताव से आगे और भी कुछ करना होगा।

पर यह बिल्कुल सम्भव है कि हम सभी बातों को एक ऐसे प्रस्ताव में नहीं शामिल कर सकते। हमें इस प्रस्ताव के अभिप्राय पर विचार करना है और इसी हिसाब से विधान बनाना है। और यह विधान बनाने में हमें देखना होगा कि मौलिक अधिकारों के एक घोषणा-पत्र की व्यवस्था की जाती है। हम उस पर सहमत हैं; पर इतना ही काफी नहीं होगा। कई अन्य देशों में भी मौलिक अधिकारों के घोषणा-पत्र तैयार हुए थे। पर इन मौलिक अधिकारों की उपेक्षा उनकी ही सरकारों ने की थी। इसलिए हमें अपने विधान में कुछ ऐसे नियम बनाने पड़ेंगे जिनके द्वारा हमारी जनता राष्ट्र के शासन और उसके आश्रितों के विरुद्ध कानून की सहायता की मांग समय-समय पर कर सके और इस प्रकार देख सके कि यह मौलिक अधिकार उपभोग में लाये जाते हैं उदाहरण के लिए फ्रांस में समानता, भ्रातृता और स्वतंत्रता का आदर्श था और उन्होंने यह नियम बनाया कि जब पार्लियामेंट की बैठक हो रही हो तो उसके किसी सदस्य को जेल में नहीं भेजा जा सकता। फिर भी उस अधिकार का निषेध कर दिया गया। फ्रांसीसी पार्लियामेंट के कई डिपुटी जेल भेज दिये गये और उनके विरुद्ध कोई संरक्षण काम में नहीं लाया गया। अमेरिका में कानून के सामने सब बराबर हैं, फिर भी आप देखिए उस देश में नीग्रो कितने पद्दलित हैं। हमें अपने देश में इस प्रकार की बातों की पुनरावृत्ति नहीं करनी है। इसके लिए हमें अपने कार्यकर्ताओं को, मजदूरों-किसानों को, सर्व साधारण को इस योग्य बनाना चाहिए कि वह राष्ट्र से न्यायालय जाने के और देश की सर्वोच्च

[प्रो. एन.जी. रंगा]

अदालत तक जाने के लिए खर्च मांग सकें और रक्षा की मांग कर सकें। आप जानते हैं गरीब लोग अदालत नहीं जा सकते और जब उन्हें राज्य के विरुद्ध लड़ना हो तो उनके लिये यह सोचना भी असम्भव है। जिस तरह आप फौजदारी के मामलों में गरीबों के लिये वकीलों का प्रबन्ध करते हैं, उसी प्रकार अगर आप बुनियादी अधिकारों को सामान्य जनता द्वारा काम में लाये जाने की व्यवस्था कर सकें तो कुछ सुरक्षा सम्भव है।

जनसमूह ही वास्तव में अल्पसंख्यक है, फिर भी वह इस तरह की सुरक्षाओं की मांग नहीं करता और जब वह इसके लिये मांग भी करते हैं तो वे यह नहीं कहते कि बिना इसके वैधानिक प्रगति हो ही नहीं सकती। उन्हें देश की और हमारी राष्ट्रीय प्रगति की अधिक चिन्ता है और वह हमें आगे बढ़ाते हैं। वह हमारे साथ रहते हैं। मैं नामधारी धार्मिक अल्पसंख्यकों से कहता हूं कि वह उन लोगों से पाठ सीखें। हम किसके प्रतिनिधि समझे जाते हैं? अपने देश की सामान्य जनता को फिर भी हममें से अधिकांश ऐसे हैं जो जनता सर्वसाधारण से कोई सम्बन्ध नहीं रखते। हम उनके हैं; उनके लिये खड़े भी होना चाहते हैं; पर जनता विधान-परिषद् में नहीं आ सकती। इसमें समय लग सकता है; तब तक हम उनके विश्वासपात्र रहें उनके लिये लड़ें और हम उनके पक्ष में बोलने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। जब हम लोग यह कर रहे हैं हमारे मुस्लिम लीगी दोस्त सारी दुनियां को विश्वास दिलाना चाहते हैं कि हम उन्हें नुकसान पहुंचाने का प्रयत्न कर रहे हैं इसलिये वह यहां आने की आशा नहीं रखते। और न हमें ही उनके आने की आशा है। उनसे इस स्थान में ही कह देना चाहता हूं कि यदि मुस्लिम लीग ने असहयोग का—कुछ न करने का—पथ ग्रहण कर रखा तो वह न केवल मुस्लिम जनता के लिए दु:खद होगा वरन् सारी जनता के लिए दु:ख की बात होगी। कांग्रेस ने उन्हें सन्तुष्ट करने के लिए जो कुछ किया है उससे अधिक और क्या कर सकती है? हमारे मुस्लिम लीगी दोस्त हमारे पास आने समझदारी की बातचीत करने और समझने-समझाने के बदले ब्रिटिश लोगों—अंग्रेजों के पास गये हैं। उन्हें एक-एक करके इतनी रियायतें दी जा चुकी हैं। इन हर रियायत ने इस देश के ध्येय स्वतन्त्रता—स्वराज्य के कुंज—पर काले परदे डाले हैं; इसके अलावा उन्होंने इस देश के लोगों में कटु भावना भरने के लिए बहुत से काम किये हैं। इन विविध संरक्षणों और अधिकारों को स्वीकार किया है और वे सब रियायतें भी स्वीकार की हैं जो वे ब्रिटेन से पाते रहे हैं। यह सब इसी इरादे से किया गया कि हम उनसे अपील करें कि वह यहां आ जायें और देश के लिए विधान बनाने में हमारा हाथ बटायें। अगर वे न आयें तो क्या हम जहां के तहां रुके रहेंगे? कदापि नहीं। उन्हें मालूम होना चाहिए—साथ ही औरों को भी जो उनको सहारा दे रहे हैं, कि कांग्रेस इस प्रकार आंतकित नहीं की जा सकती। हम इतिहास का निर्माण कर रहे हैं। हमारे विधानवादियों ने हमें बार-बार सलाह दी कि "भगवान् के लिए कानून के विरुद्ध न जाओ, इससे स्वराज्य नहीं मिलेगा, ब्रिटेन के साथ बातचीत चलाओ और उसी के साथ काम करो।" फिर भी हमने सत्याग्रह की शरण ली जिससे हम अपने लोगों के अधिकारों की रक्षा कर सकें। हमने प्रगति की इससे कौन इन्कार कर सकता है? यदि हम सीधा संघर्ष न करते तो क्या हम इस असेम्बली में होते? क्या मुस्लिम लीग इस तरह की बाधाएं उस अवस्था में डाल सकती थी जैसी अब डाल रही है? हमारे

इन वर्षों के संघर्ष और बलिदान का ही तो यह परिणाम है। हम ऐसी स्थिति प्राप्त कर चुके हैं कि अब ब्रिटिश सरकार हमारी प्रगति नहीं रोक सकती। ब्रिटिश साम्राज्यवाद इस बात की कोशिश में है कि उसे कुछ साथी ऐसे मिल जायें जो हमारे मार्ग में बाधा डालें—चाहे वह एक दिन या कुछ मिनट के लिए ही क्यों न हो। पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद को सफलता नहीं मिलेगी। और क्या, हमारी जनता शीघ्र ही उस स्थिति में पहुँच जायेगी जब वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद को उसके इस देश के साथियों सहित अलग करके आगे बढ़ने में मदद देगी। स्वयं मुस्लिम लीग की स्थिति क्या है? एक समय था, जब मि. जिन्ना कहते थे कि स्वतन्त्रता तो एक मृगतृष्णा मात्र है और भारत के लिए आजादी का दावा करना मूर्खतापूर्ण है। उन्होंने 'सीधे संघर्ष' को हास्यास्पद बताया और अब वह खुद ही आजादी का दावा करते हैं और उन्होंने घोषणा की है कि अब वह हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता के पक्ष में हैं। उन्होंने मुस्लिम लीग के मंच से कहा है कि वह ''भारत छोड़ो'' के पक्ष में हैं यद्यपि उन्होंने इस नारे को ''देश को हममें बांट दो और फिर छोड़ो'' के रूप में स्वीकार किया है, उन्होंने हमारा ही अनुसरण किया है। वह आज दो विधान-परिषद् चाहते हैं जबकि कुछ ही समय पहले वह विधान-परिषद् की बात सोचने के लिए भी तैयार नहीं थे। इससे क्या प्रकट होता है? मैं कहता हूं कि अगर हम आगे बढ़ें तो मि. जिन्ना को भी बाध्य होकर आगे बढ़ना पड़ेगा जिसका सीधा कारण यह है कि साधारण जनता चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान चाहे जिस साम्प्रदाय की भी हो, अपने राजनीतिक नेताओं को इसके लिये प्रोत्साहित कर रही है कि वह आगे बढ़ें और उसी ढंग से जिस प्रकार हिन्दुस्तान आगे बढ़ सकता है। इसलिये मैं मुस्लिम लीग वालों से अनुरोध करता हूं कि इस सभा में आ जायें और हमारे साथ सहयोग करें बशर्ते कि वे अपने नवाबों और अपने जागीरदारों के स्वार्थों के समर्थन के लिये न आयें।

अभी कुछ ही दिनों पहले मि. जिन्ना दावा करते थे कि वह भी उतने ही प्रजातंत्रवादी हैं जितनी कि कांग्रेस। अगर वह प्रजातंत्रवादी हैं तो इस बात पर विचार करें कि किस सम्प्रदाय में गरीबों की संख्या अधिक है। हिन्दुओं का बहुत-सा प्रतिशतक गरीब नहीं हैं, पर मुसलमानों में अमीर उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। सारे देश में मुस्लिम जनता सबसे गरीब है। उन्हें स्वतंत्र भारत की सब से ज्याादा जरूरत है, क्योंकि उसके बिना कबीलों, हरिजन, मुस्लिम मजदूर या किसानों का उद्धार नहीं हो सकता। मि. जिन्ना और उसके साथी जितना ही मामले को आगे बढ़ा रहे हैं, गुलामी की यंत्रणा उतनी ही बढ़ती जा रही है उनका निजी समूह (मुस्लिमगण) कोई भी प्रगति करने से वंचित है।

अन्त में, मैं इस सभा से प्रार्थना करना चाहता हूं कि आवश्यक विधान का निर्माण समुचित रूप में किया जाये जिससे जनता को इस प्रस्ताव में वर्णित अनेक अधिकारों के उपभोग का अवसर मिले। इस प्रकार के विधान के बिना यह प्रस्ताव व्यर्थ हो जायेगा। यह एक प्रकार की पवित्र आशा ही बनी रह जायेगी और कुछ नहीं। यह सच है कि जब यह हमारी पाठ्य-पुस्तकों में सम्मिलित हो जायेगा और हमारे बालक-बालिकाएं उसे अपने पाठ में पढ़ेंगे तो उससे शिक्षा का बहुत बड़ा काम हो जायेगा। पर इतना ही काफी नहीं होगा। अमेरिका में भी ऐसा ही हुआ था फिर भी जनता के सामान्य अधिकारों को सरकार ने निरर्थक बना दिया, इसलिये हमें विधान में आवश्यक व्यवस्था सम्मिलित कर लेनी चाहिए जिससे जन-समूह

[प्रो. एन.जी. रंगा]

की हित-रक्षा हो और उन्हें आश्वासन प्राप्त हो जाये कि वह अवसर भी उन्हें प्राप्त हो सकेंगे यदि वे इन अधिकारों का उपभोग कर सकेंगे।

***डॉ. पी.के. सेन** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करता हूं। मेरे पहले बहुत से वक्ता इस बैठक में बोल चुके हैं और इसके पहले की बैठक में भी। बहुत से पहलुओं पर पूरी तौर पर वाद-विवाद हो चुका है। मैं इन्हीं पहलुओं पर और वही बातें फिर दुहराना नहीं चाहता। पर मेरा ख्याल है कि यह प्रस्ताव अपनी सभी शाखाओं के साथ उसके पहले पास कर लेना बहुत ही महत्वपूर्ण है जब कि हम स्वतंत्र भारत का विधान तैयार करने बैठे। यह भी आवश्यक है कि इस प्रस्ताव द्वारा जैसा कि इसमें रखा गया है—भारत को 'स्वतंत्र सर्वसत्तापूर्ण प्रजातंत्र' घोषित कर दें।

जैसा कि आज के सर्वप्रथम वक्ता ने कहा है, बहुत से ऐसे लोग हैं जो सन्दिग्ध, अनिश्चित और उपहासकर्ता हैं। इसलिए यह जरूरी है कि हम संसार में यह घोषित कर दें कि हम अपने कर्तव्य पालन पर दृढ़ हैं और स्वतंत्र सर्वसत्ता पूर्ण प्रजातन्त्र जिसमें अन्तिम सत्ता प्रजाजन के हाथ में होगी और सभी शक्तियां और अधिकार प्रजा से ही प्राप्त होंगे। आज इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि सभी दलों के लोग इससे सहमत हैं। चाहे हम अपने दोस्त मुस्लिम लीगियों की बात करें या कांग्रेस की अथवा विभिन्न तथा आर्थिक अल्पसंख्यकों की, अछूतों की जो ऐसा शब्द है जिससे मुझे घृणा है अथवा दबे और पद्दलित लोगों की, वास्तव में सभी हमारे भाई हैं जिन्हें तालिकाबद्ध जातियों में रखा गया है। इनमें किसी भी श्रेणी के राजनीतिक विचार को लीजिए क्या उसमें तनिक भी सन्देह है कि सब का ध्येय स्वाधीनता है? ब्रिटिश सरकार ने भी, जो अब अधिकार सौंपने को तैयार हो गयी है, निश्चित रूप में घोषित किया है कि हमारा ध्येय स्वतंत्रता या आजादी है। ऐसी स्थिति में हमारे लिये तो अनिवार्य है कि हम अपना प्रस्ताव इसी रूप में निर्मित करें।

मुझे इनमें से कुछ शब्द याद हैं जिनके साथ माननीय प्रस्तावक ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया है। वह मेरे कानों में गूंज रहे हैं। उन्होंने कहा है—''यह हमारा निश्चय है, प्रतिज्ञा है और समर्पण है.....'' हां, यह समर्पण है। हम अभी अपने काम का प्रारम्भ ही कर रहे हैं अभी हमने ड्योढ़ी भी पार नहीं की है। हम लोग ड्योढ़ी में जमा हुये यात्री हैं और अब मन्दिर का प्रवेश-द्वार पार करने ही वाले हैं। यही वह समय है जब हमें समर्पण और आत्मार्पण की प्रतिज्ञा करनी चाहिए और इस काम को पूरा करना चाहिए जिसका बीड़ा हमने उठाया है। हम पर भारी जिम्मेदारी है और यह उचित है कि ऐसे अवसर पर काम वास्तविक रूप में आरम्भ करने के पहले हमें एक दृढ़ निश्चय करना होगा कि हम योग्य प्रतिनिधियों को शोभा देने योग्य रूप में अपने कर्तव्य का पालन करेंगे और स्वतंत्र सर्वसत्तापूर्ण प्रजातंत्र के लिए विधान तैयार करेंगे।

इसका एक और पहलू है जिसकी चर्चा माननीय सदस्य ने की है और वह मेरे विचार से बहुत महत्वपूर्ण है। यदि मैंने जो बात कही है वह प्रस्ताव के सिद्धांत के सम्बन्ध में है तो यह यथार्थ के सम्बन्ध में है। हमें केवल अपना ही विचार

नहीं करना है, उनका भी करना है जो यहां अब तक नहीं हैं। हम देश के पीछे कुछ 'अदृश्य लोग' भी हैं, हमारे मुस्लिम लीगी दोस्त और देशी राज्यों के प्रतिनिधि भी अभी निश्चित होने वाले हैं। यदि वे भी यहां आ जायें और यह सभा भी पूर्णत: नियुक्त हो जाये और सब जगहें भर जायें, तो भी वह 40 करोड़ जनता जिसके हम प्रतिनिधि हैं—यहां नहीं होगी। इसीलिए मैं यह बात दुहराता हूं कि जो काम हमारे सामने है उसे करने में हमें सदा सचेत रहना होगा कि इन दृश्य लोगों द्वारा ही असेम्बली पूर्णत: नहीं बन जाती, हमारे पीछे 'अदृश्य लोग' भी हैं यह समझने पर ही हम ऐसा विधान बना सकेंगे जो इस विशाल राष्ट्र को सच्ची स्वतंत्रता, मानव-जीवन का सच्चा अधिकार—उसे भौतिक अधिकार कहिए या अल्पसंख्यकों के अधिकार अथवा जो भी नाम दीजिए प्रदान करेगा। जब हम यह समझ कर कि हम स्वतंत्र भारत के प्रजातंत्र के लिये शासन-विधान तैयार कर रहे हैं, अपने काम को आगे बढ़ायेंगे तो हम स्पष्ट देखेंगे कि अभी किन समस्याओं को हमें सुलझाना है। सभी कामों में हम सदा महात्मा गांधी की आत्मा की उपस्थिति अनुभव करेंगे वह क्षीण पर प्रकाशमान स्वरूप जो अपने कंधे पर संकीर्णमना लोगों के शोक और पीड़ा का मनुष्य-मनुष्य और सम्प्रदाय-सम्प्रदाय के बीच फैले हुए ईर्ष्या, द्वेष, सन्देह और अविश्वास का बोझ ढो रहे हैं, परन्तु फिर भी जो अपना हृदय उस आशा से भरे हुए हैं जो हमारे भाग्य के निर्माता भगवान् में अटल श्रद्धा से उत्पन्न होती है इसमें सन्देह नहीं है कि इस विधान-परिषद् में परमात्मा का हाथ दिखाई देता है जो इस देश और सारे जगत के भाग्य का निर्माण कर रहा है। उस सचेतन आशा और विश्वास की प्रेरणा से मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि प्रस्ताव सर्वसम्मति से और हमारे हार्दिक समर्थन के साथ पास होगा।

***श्री एस. नागथा** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अस्थायी सरकार के माननीय उपाध्यक्ष पं. जवाहरलाल नेहरू के प्रस्ताव का समर्थन करने में बड़े आनन्द का अनुभव कर रहा हूं। यह प्रस्ताव सभी सम्प्रदायों और श्रेणियों को बहुत व्यापक अवसर प्रदान करता है। महोदय, मेरे कुछ दोस्तों ने पहले इस बात पर खेद प्रकट किया है कि कुछ लोग यहां उपस्थित नहीं हुए हैं मेरा ख्याल है कि जो हाजिर नहीं हुए हैं उनके लिए हमें अफसोस करने की कोई जरूरत नहीं है। वास्तव में वे यहां आने के अधिकारी भी नहीं हैं; क्योंकि वे हिन्दुस्तानी नहीं हैं। वे हिन्दुस्तानी कम और अधिक हैं; वे फारसी ज्यादा और हिन्दुस्तानी कम हैं—तुर्क अधिक हैं हिन्दुस्तानी कम। इसलिए वे विदेशों की ओर देखते हैं और इस देश की आजादी की ओर नहीं। यदि वे सचमुच इस देश की आजादी से दिलचस्पी रखते तो आज यहां उपस्थित होते और इस महान सभा में भाग लेकर देश को आजाद करने में सहायक होते। मैं समझता हूं कि हमारे जो दोस्त उन गैरहाजिरों के लिए दु:खी हैं वह चाहें तो बाहर जा सकते हैं। हम हरिजन और आदिवासी इस भूमि के आदिम और सच्चे पुत्र हैं और हमें इसका शासन-विधान बनाने का पूरा हक है। तथाकथित सवर्ण हिन्दू भी सच्चे हिन्दुस्तानी नहीं हैं और चाहें तो वे भी चले जा सकते हैं। *(बाधा)* महोदय, आज हम अंग्रेजों को यह देश छोड़ने के लिए कह रहे हैं। किस लिए? क्या वह मनुष्य नहीं हैं? क्या वह इस देश में रहने का अधिकार नहीं रखते? हम उनसे इसलिए इस देश को छोड़कर चले जाने को कहते हैं कि वह विदेशी हैं। इसी तरह हम आर्यों को, जो प्रवासी हैं, देश छोड़ने के लिए कह सकते हैं। हमें अधिकार है कि हम मुसलमानों से, जो उस देश पर हमले करके घुसे थे, कह दें कि इस देश से निकल जाओ।

[श्री एस. नागथा]

इसमें सिर्फ एक बात विचारणीय है। इस देश के सवर्ण हिन्दुओं के जाने के लिए और कोई जगह नहीं है केवल यही विचार उनके पक्ष में है। अब हम सब हिन्दुस्तानी हैं। हम सबको यही सोचना चाहिए। भाईचारे से हम अपने बीच ऐक्य स्थापित करें। और शीघ्रातिशीघ्र अपने देश को स्वतंत्र करने का प्रयत्न करें। हममें से कोई भी किसी अन्य या तीसरे का गुलाम नहीं होना चाहता। सब स्वतंत्र होना चाहते हैं। महोदय, यह प्रस्ताव सबको समान अवसर प्रदान करता है। यह 'समान अवसर' शब्द केवल कानूनी किताब में ही नहीं पड़े रहने चाहिएं। उन्हें कार्य रूप में परिणत करना चाहिए। इस देश के प्रत्येक व्यक्ति को यह समझ लेना चाहिए कि वह देश का शासक है। उसे समझा दिया जाना चाहिए कि वही देश का सच्चा शासक है।

महोदय, मुझे इस भूमि के अभागे सच्चे निवासियों की सुरक्षा पर कुछ नहीं कहना है। जब से हम आर्यों द्वारा पराजित हुए हम उनके गुलाम बने हुए हैं। हमने कष्ट उठाये हैं; पर अब और दु:ख भोगने को तैयार नहीं हैं। हमने अपनी जिम्मेदारियों समझ ली हैं हम जानते हैं कि हम अपनी बात कैसे मनवा सकते हैं।

महोदय, बहुत से दोस्तों ने अल्पसंख्यकों के बारे में अनेक बातें कही हैं। मैं यह दावा नहीं करता कि हम धार्मिक अल्पसंख्यक या जातीय अल्पसंख्यक हैं मैं दावा करता हूं कि हम राजनीतिक अल्पसंख्यक है। हम अल्पसंख्यक इसलिये हैं कि अब तक हमें स्वीकार नहीं किया गया था और हमें इस देश के शासन में समुचित भाग नहीं दिया गया था। पर यह बात हमेशा के लिए नहीं रह सकती। आपको मालूम है कि हमारी स्थिति कैसी रही है? यह प्रस्ताव हमें इसका अवसर देता है कि हम समानता का अधिकार प्राप्त करें और इस देश के शासन में समुचित भाग लें।

महोदय, हमारी संख्या देश की सारी जनसंख्या का पांचवां भाग है। किसी प्रजातंत्र देश के लिए यह असम्भव है कि वह पंचमांश प्रजा की उपेक्षा करे, मेरे जो दोस्त उस सभास्थल के बाहर हैं या इस महान असेम्बली में भाग नहीं ले रहे हैं, वह इस बात को समझ सकते हैं। उनको सुविधा देने के लिए कांग्रेस बहुत दूर तक गई। हम वक्तव्य को स्वीकार करके भी हम वह सभी दे रहे हैं जो वे मांग रहे थे। हमारा यह ध्येय नहीं होना चाहिए कि चूंकि अमुक दल रो रहा है इसलिए हमें उदार बन जाना चाहिए और वे जो कुछ चाहें उन्हें देते जाना चाहिए। ऐसा मालूम होता है कि आप किसी विशेष सम्प्रदाय को सान्त्वना देने में ही लगे रहे हैं। आपने इतनी सहिष्णुता दिखाई है, इतनी उदारता प्रदर्शित की है और अपने हित की प्रवाह न करते हुए भी देते चले गये हैं। मेरा अब आपसे यही अनुरोध है कि अब सबके साथ न्याय होना चाहिए। अगर आप किसी अल्पसंख्यक जाति को अधिक जगहें देते हैं, तो उससे अन्य अल्पसंख्यकों को भी मांगने की गुंजाइश और अवसर जाता है। इस तरह मैं आपसे पूछता हूं कि क्या कोई भी बहुमत सभी अल्पसंख्यकों को सन्तुष्ट कर सकता है? इसलिए मैं चाहता हूं कि आप दृढ़ संकल्प हों, शक्तिशाली हों और सब सम्प्रदायों के प्रति न्याय करें। चूंकि एक दल मांगता ही जाता है इसलिये आपको देते ही नहीं जाना चाहिए। यहां कहा गया है—मुझे खुशी है कि पंडित जी ने कृपा करके यह स्वीकार

कर लिया है कि प्रस्ताव में यह शामिल किया जायेगा कि अल्पसंख्यकों—पिछड़े हुए लोगों आदिवासियों और कबीलों एवं दलित वर्गों—की सुरक्षा की व्यवस्था की जायेगी। इससे सभी सम्प्रदायों को समान अवसर प्राप्त हो जाता है और जाति और धर्म की कोई बात बाधक नहीं होती। मैं नहीं समझता कि एक खास दल ही ऐसी मांगें क्यों करता रहता है जो उचित और न्याय्य नहीं है? केवल मांगने के कारण ही आप देते चले जाते हैं। इससे तो अल्पसंख्यकों को अधिकाधिक मांगते जाने का अवसर मिलता है। इस प्रस्ताव में जो कुछ कहा गया है वह स्पष्ट है और इसकी शब्दावली सावधानी के साथ रखी गयी है, मेरा तो एक मात्र अनुरोध अब यही होगा कि इसमें प्रत्येक शब्द और उसके अभिप्राय को कार्य रूप में परिणत किया जाये। केवल पास कर देने से प्रस्ताव का कोई महत्व नहीं होता। उसे सौ फीसदी कार्य रूप में 'परिणत' करना चाहिए। तभी प्रस्ताव का मूल्य है। ''दर्जे और अवसर की समानता'' (Equality of status and of opportunity) शब्द कहे तो गए हैं। पर मैं कहूंगा कि समान अवसर का तो यह मतलब है कि कभी न कभी हरिजन को भी भारत के प्रधानमंत्री का पद प्राप्त हो। इस तरह का अवसर यहां होना चाहिए। समान अवसर को कार्यरूप में परिणत करना चाहिए। मैं एक और बात असेम्बली के सामने इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए पेश करना चाहता हूं। जनता इस महान एसेम्बली की ओर देख रही है और इसके द्वारा जब 40 करोड़ निवासियों के भाग्य का निर्णय हो रहा है तो महोदय, मुझे आशा है कि इस प्रस्ताव का प्रत्येक शब्द; प्रत्येक अक्षर पूर्णत: कार्यरूप में परिणित किया जायेगा।

***श्री जगतनारायण लाल** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे लिये यह एक सुअवसर है कि मुझसे इस प्रस्ताव का समर्थन करने के लिए कहा गया है। यह तो उचित ही हुआ कि इस ऐतिहासिक प्रस्ताव को पं. जवाहरलाल नेहरू ने उपस्थित किया; क्योंकि पंडित जी ने ही सन् 1926 ई. में मद्रास-कांग्रेस के अवसर पर पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास कराया था। उन्हीं के राष्ट्रपतित्व में सन् 1929 ई. कांग्रेस ने भारत की स्वाधीनता को अपना सिद्धान्त बनाया था। और सन् 1934 ई. पंडित जी ने ही कहा था कि ''राजनीतिक और राष्ट्रीय दृष्टि से यदि यह स्वीकार किया गया और यह स्वीकार किया जाना ही चाहिए कि भारत की जनता ही भारत के भाग्य का फैसला कर सकती है और इसलिये उसे अपना विधान बनाने की स्वतंत्रता होनी चाहिए तो यह काम विस्तृत मताधिकार द्वारा निर्वाचित विधान-परिषद् ही कर सकती है। जो स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं उनके लिए और कोई मार्ग नहीं है।'' इसलिए विधान-परिषद् में इस स्मरणीय अवसर पर इस देश की ओर से पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा पेश किये गये इस प्रस्ताव का विशेष महत्व है। मैं समझता हूं कि यह प्रस्ताव हममें से प्रत्येक सदस्य के लिए और सारे देश के लिए एक प्रतिज्ञा—एक गम्भीर निश्चय है। जब से इस असेम्बली की बैठक आरंभ हुई है, उसके पहले से ही हम ब्रिटिश सरकार की मनोवृत्ति में एक परिवर्तन देख रहे हैं। हम यह कहना चाहेंगे कि हम सदी में और इससे पहले कितने ही शासन विधान असेम्बलियों द्वारा बनाये गये है। यह तो ब्रिटिश सरकार को स्वयं सोचना चाहिए कि वह इस असेम्बली को किस रूप में देखना चाहती है और वह कैसा विधान इससे स्वीकार कराना चाहती है। उदाहरण के लिए संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का विधान हमारे सामने है जो सन् 1774-75 ई.

[श्री जगतनारायण लाल]

में स्वातंत्र्य-युद्ध के बाद बनाया गया था। वह हमारे शब्दों में हिंसात्मक क्रांति थी। उस स्वातंत्र्य युद्ध के बाद जो विधान बना था वह भी उन विधानों में एक था। बाद में 19वीं सदी में अनेक विधान समझौते के द्वारा बने। सन् 1867 ई. में कनाडा का उपनिवेश एक संघ बना। शान्तिपूर्ण समझौते के बाद उसका विधान बना और उसका विकास हुआ और ब्रिटिश सरकार ने उसे स्वीकार कर लिया। फिर सन् 1900 ई. में आस्ट्रेलियन उपनिवेश का सृजन एक शान्तिपूर्ण समझौते से बनाये हुए विधान द्वारा हुआ। साउथ अफ्रीका के यूनियन का भी एक उदाहरण हमारे सामने है। सन् 1909 ई. में वह भी उपनिवेश बन गया और उसका निर्माण भी शान्तिपूर्वक निर्मित विधान के अनुसार हुआ। उसके बाद ताजा उदाहरण सन् 1921 ई. में आयरलैंड का है। उसे ब्रिटेन के साथ समझौता करने को कहा गया था। यह स्थिति छापामार युद्ध और लम्बे सिनफीन आन्दोलन के बाद उत्पन्न हुई थी और वह भी जब ब्रिटिश सरकार अपने अथक परिश्रम से थक गयी अलस्टर को अस्तित्व में ला दिया। आयरलैंड का मामला सब से बाद का है और उसे ब्रिटिश सरकार को उसके वर्तमान मंत्रिमंडल को याद रखना चाहिये। आयरिश लोगों के मस्तिष्क में अभी तक उस पीड़ा की याद ताजी है और सदा ताजी रहेगी और उसका परिणाम यह हुआ कि वे लोग ब्रिटेन से बिछुड़ गये और अभी तक उनका संयोग नहीं हो सका है। अगर भारतीय विधान परिषद् में बैठते हैं और विधान बनाना चाहते हैं तो मैं फिर दुहराता हूं कि यह ब्रिटिश सरकार के फैसले की बात है कि वह विधान आयरलैंड के विधान के ढंग का होगा या अमेरिका के ढंग का अथवा उसका निर्माण शान्तिपूर्ण ढंग से होगा। लक्षणों से तो यही मालूम होता है कि ब्रिटिश सरकार ने अभी अलस्टर का ढंग नहीं छोड़ा है जिसे वह आयरलैंड में और अन्य कई देशों में परीक्षा करके देख चुके हैं। यदि वे उस ढंग का अनुसरण करने के लिए हठ करते हैं तो परिणाम भी आयरलैंड के ही ढंग का होगा। इसलिये मैं दुहराता हूं और ब्रिटिश सरकार को सावधान करता हूं कि उसके लिए अच्छा यही होगा कि वह अपने लुभाने और कूटनीति के सभी उपायों से हम विधान परिषद् के कार्य को सफल करे और इसे अपने प्रयत्नों और हमारे सहयोग से सम्पन्न बनाये।

महाशय, मैं अब इतने विलम्ब के बाद कुछ अधिक न कहना चाहूंगा। मैं फिर दुहराना चाहता हूं कि मैं इस प्रस्ताव को एक ऐसी प्रतिज्ञा और दृढ़ निश्चय मानता हूं कि जिसके द्वारा स्वतंत्र भारत की सृष्टि होगी। इस निश्चय के पीछे दृढ़ता है। यह दृढ़ता हमारी इच्छा और हमारा निश्चय है और हमें यह दृढ़ता और इच्छा-बल सारे राष्ट्र से प्राप्त हुआ है जिसने हमें यहां भेजा है। मुझे आशा है कि जब समय आयेगा तो हम इस विधान-परिषद् को स्वतंत्र भारत का ऐसा विधान तैयार करते देखेंगे जो शान्ति के साथ अस्तित्व में आयेगा और यदि शान्ति से अस्तित्व में न आया तो यह ब्रिटिश सरकार के पसन्द किये हुए किसी अन्य ढंग से या आवश्यकतानुसार हमारे पसन्द किये हुए ढंग से अस्तित्व में आयेगा। महोदय, मुझे अधिक कुछ नहीं कहना है। मैं इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूं और आशा करता हूं कि अन्त में जो प्रस्ताव डॉ. जयकर ने पेश किया था वह अब निरुपयोगी होने के कारण समय आने पर वापस ले लिया जायेगा।

श्री अलगूराय शास्त्री (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करने के लिये आया हूं जो हमारे देश के प्यारे नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू जी ने उपस्थित किया था। आज कोई हिन्दुस्तानी ऐसा अभागा नहीं है जो आज इस सभा और भवन में बैठकर हिन्दुस्तान का भावी विधान न बनाना चाहता हो। किसी भारतीय के लिए इससे बढ़कर सौभाग्य की बात और क्या हो सकती है कि वह आज अपने देश का स्वाधीन विधान बनाने के लिए यहां आया है? इस प्रस्ताव में जिस भाषा का प्रयोग किया गया है, जिन भावों का इसमें समावेश है वह ऐसे हैं कि जिनका समर्थन करने के लिए प्रत्येक हृदय लालायित है। यह प्रस्ताव ऐसा उच्चतम है और अपने अन्दर ऐसे भाव रखता है जिसकी कामना भारतीय सदियों से कर रहे हैं। एक दिन था जब कि यह हमारा राष्ट्र एक महान् राष्ट्र था और एक महान् स्वतन्त्र देश था। सदियां गुजर गईं, पराधीनता की बेड़ियां उसको जकड़े हुए हैं और उनकी टूटने की आकांक्षा को लेकर इस देश के युवक, इस देश की नारियां और इस देश के बूढ़े सब सतत् प्रयत्न कर रहे हैं। आज वह दिन आया है जब हम इस जगह पर एकत्रित हुए हैं कि अपने राष्ट्र को स्वतन्त्र घोषित करेंगे जो इस प्रस्ताव के पहले भाग में था। आज देश के लिए इससे ज्यादा अच्छी बात नहीं हो सकती है कि आज हम केवल यह घोषित करें कि हम अपने राष्ट्र को स्वतंत्र घोषित करेंगे। आज हम स्वतंत्र राष्ट्र घोषित नहीं कर रहे हैं बल्कि आज हम केवल व्यावहारिक दृष्टि से इतना कह रहे हैं कि हम इसे स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित करेंगे। यह मुसम्मम इरादा है। इसलिए इस प्रस्ताव को अपनाया है और इसका स्वागत करते हैं।

इस प्रस्ताव में यह बातें कही गई हैं कि हम जिस स्वतन्त्र राष्ट्र की घोषणा करते हैं उसमें वह सारे भाग भी सम्मिलित होंगे जो आज ब्रिटिश इंडिया के नाम से दुर्भाग्य की वजह से कहे जाते हैं। ब्रिटिश इंडिया ''इंडिया'' नहीं हैं। ब्रिटिश इंडिया, ''इंडिया भारत'' नहीं है। जिस भाग पर, भारत के जिस भू-भाग पर आज अंग्रेजी हुकूमत है, अंग्रेजों की हुकूमत का दौरदौरा है वह सारी भूमि स्वतन्त्र भाग राष्ट्र का न होगा। यही नहीं ब्रिटिश सत्ता के अन्दर जो भी भाग हैं और जो उनके अन्तर्गत हैं वह भी इस स्वतंत्र राष्ट्र में सम्मिलित किये जायेंगे, यह हमारी कामना है और यह इस प्रस्ताव की घोषणा है। यही नहीं, ऐसे भी अंग इस देश के अन्दर हैं जिनके ऊपर दूसरी सत्ता का अधिकार है। जैसे पांडुचेरी, गोवा, डैमन और डयू है। ये अंग जिन पर दूसरी सत्ता शासन कर रही है वह सब भारत के अंग हैं हमारी कामना है वे सभी अंग स्वतन्त्र राष्ट्र में सम्मिलित हो जायेंगे। इस प्रस्ताव की कल्पना क्या है, हम स्वतन्त्र राष्ट्र चाहते हैं और यही घोषित करना चाहते हैं और हम इन शब्दों का स्वागत करते हैं। पूर्वकाल से लेकर आज तक मनुष्य जीवन के ऊंचे आदर्श रहे हैं। मनुष्य भाई-भाई की तरह रहते हुए आये हैं। ऋग्वेद के 8वें चरण में इस बात की कल्पना तो प्राचीन काल से की गई है कि मनुष्य में न कोई छोटा था और न कोई बड़ा था। जिस तरह से मां अपने पुत्र को मानती है उसी तरह से राजा भी प्रजा को अपने पुत्र के समान मानते थे, यह कल्पना भी ऋग्वेद के 8वें चरण में मिलती है। जो समानता और आदर्श हमको पहले से सिखाई गई है वही इस प्रस्ताव पर दोहराई गई है उसको देखकर हमको प्रसन्नता हुई। इसलिए मैं इसका समर्थन करने के लिए यहां पर आकर खड़ा हुआ हूं।

[श्री अलगूराय शास्त्री]

हमने देखा कि हम ऐसे राष्ट्र की कल्पना इस प्रस्ताव से कर रहे हैं जिस राष्ट्र में अन्न, वस्त्र की कमी न होगी, समान रूप में चीजें प्राप्त होंगी। इसमें हमको ऐसे आदर्श की ध्वनि मिलती है जिसमें कहा गया है ''to each according to his needs and from each according to his capacity''। ऐसी समानता का आदर्श इसमें उपस्थित है। भागवत के अन्दर जो शब्द राष्ट्र की समानता के लिए है वह इस प्रस्ताव में मिलते हैं। प्रजा की जो आवश्यकता है उसको पूरा करना राष्ट्र का परम धर्म है राजा के व्यवहार में प्रजा के लिए समानता होगी वह हमको इस आदर्श तक ले जाती हैं। उसमें ऊंच-नीच का कोई भेदभाव नहीं पाया जाता है और न रखा गया है। वर्ग के एक दूसरे के इस भेद को हम मिटाना चाहते हैं। मनुष्य का व्यवहार दूसरों के साथ एक आदर्श के रूप में होना चाहिये यह हम चाहते हैं।

इस प्रस्ताव की यह घोषणा है, इसलिए हम इसका स्वागत करते हैं और समर्थन करते हैं। इसके आगे इस बात की भी कल्पना करते हैं कि हम जिस राष्ट्र की स्थापना करने जा रहे हैं, जो स्वतन्त्र राष्ट्र हमारा होगा वह स्वतन्त्र राष्ट्र इसलिए नहीं होगा कि वह अपनी सत्ता से एक पृथक् राष्ट्र बना लेगा। और उसको दुनिया की भलाई और बुराई से कोई मतलब न होगा। बल्कि इसमें कहा गया है कि यह महान राष्ट्र अपने प्राचीन उसूल लेकर स्वतंत्र होगा और अपनी उन्नति की आकांक्षाओं को पूरा करेगा। हमारा राष्ट्र, हमारी सारी शक्तियां सारे विश्व के लिए होंगी और हम सारे संसार के साथ और मानवजाति की उन्नति के एक मात्र आधार पर, एक समुदाय के आधार पर सम्बन्ध स्थापित करेंगे और इससे संसार की सेवा करने के लिए जीवन का उपयोग करेंगे।

इस प्रस्ताव के पीछे महान् आदर्श है, जो हमारे सामने रखा है। एक चीज जो सबसे बड़े महत्व की इस प्रस्ताव में है कि हम जिस राष्ट्र को बनाने जा रहे हैं उस राष्ट्र की स्वतंत्रता का जो अपहरण किया गया है, उस अपहरण से उसको निकाल कर स्वतंत्र बनायेंगे। वह जो स्वतंत्रता हमने हासिल की है उस स्वतंत्रता को हम बनाये रखने के लिये उसकी रक्षा करेंगे। इस प्रस्ताव में पुरातन धर्म के ऋग्वेद के प्राचीन आदर्श अच्छी तरह से अभिव्यक्त हुये हैं यहां हमको 'देवाहितम् यदायुः' की बात जो कही गयी है वह इसमें सफाई के साथ कही गयी है। कोई भी राष्ट्र जिसकी स्वतंत्रता हासिल कर ली गयी हो, लेकिन वह अपनी सहन शक्ति से यदि कमजोर है तो वह जीवित नहीं रह सकता, उसकी रक्षा नहीं हो सकती। वही राष्ट्र अविचल है। ध्रुव है, निश्चल है, जिस राष्ट्र को प्रजा चाहती है 'इन्द्रस्त्वाभिरक्षतु'।

प्रजा जिसकी कामना करे ऐसा राष्ट्र और जब हम social, economic और आर्थिक equality लोगों को देने जा रहे हैं, तो यकीनन वह प्रजावर्ग का राष्ट्र होगा। हमने इसमें कल्पना की है कि state power, सारे राष्ट्र की पूरी शासनशक्ति जनता के हाथ में हो। तभी हमने प्रजा के राज्य की कल्पना की है। हमने प्रजातन्त्र की कल्पना की है कि जिसमें राजा प्रजा का भेद मिट जाता है। वह राष्ट्र होता है, जिसके बारे में प्रसिद्ध कवि कालिदास ने कहा है कि:—

''वही राष्ट्र आदर्श राष्ट्र होगा जिस राष्ट्र में शासक और शासित के जो दयनीय भेद हैं वह न हों, जहां पर शासक द्वारा अत्याचार, शोषण न हो और जहां पर प्रजा सतायी न जाती हो और जेलों में सड़ायी न जाती हो। प्रजा उस

राष्ट्र की कल्पना करेगी, उस राष्ट्र को चाहेगी जिसमें कि ऋग्वेद को महान् आदर्श पूरे होते होंगे। उसी राष्ट्र की कल्पना इस प्रस्ताव के द्वारा की गयी है। इसलिए हम इस प्रस्ताव का स्वागत करते हैं। यह प्रस्ताव आज हमको ऐसी जगह ले आकर खड़ा कर देता है कि जहां से संसार इस बात को देखेगा कि हम जिस स्वाधीनता की कल्पना करते हैं, वह स्वाधीनता अपने स्वार्थ के लिए नहीं है उस स्वाधीनता में प्रजावर्ग के ऊपर जबरदस्ती शासन न होगा। यह तमाम चीजें महान् वैदिक आदर्शों की इसमें हम देखते हैं। वहां हम हजरत उमर से लेकर और यहां पर बहादुरशाह की हकूमत तक के मुस्लिम शासन काल में जिस बात की कल्पना रही है कि प्रजा का रक्षण प्रजा पालन के महान् आदर्श भी इसमें विद्यमान हैं। मोहम्मद बिन कासिम ने जब सिन्ध पर कब्जा किया और उस पर अपना अधिकार जमाया तो हजरत उमर को उसने खत लिखा कि अपने अधीनस्थ सिन्धवासियों के साथ कैसा बर्ताव किया जाये, वह राष्ट्र के इतिहास का बड़ा महत्वशाली document है और बड़ी भारी निधि है। इसमें हमें हजरत उमर का वह फतवा मिलता है जिसमें यह दर्ज है कि जो लोग तुम्हारे अधीन हो गये हैं, उनके साथ पुत्र की तरह व्यवहार करो, उनके पूजा घरों की रक्षा करो, उनके धन, जन और माल की रक्षा करो और उसी आदर्श को लेकर हुमायूं ने अकबर को निधि दी और बराबर वह चलती रही। अकबर के आईने अकबरी में प्रजा के साथ राजा का जो सम्बन्ध बतलाया गया है, उसमें किसी भी जगह नहीं है कि हम प्रजा को सतायें, उसकी स्वतंत्रता का अपहरण करें। पहले के शासक इन आदर्शों के कायल थे और आज हम उनको पूरा करने के लिये आये हैं, आज वह सब हमको पूरा करना है और यह प्रस्ताव उसकी तरफ हमें ले जाता है। आज हम इस भवन में बैठकर जब अंग्रेजी में बोलते हैं तो यहां हमारे मद्रास के लोगों को हमारी बातें समझने में आसानी होती है और अखबारों में publicity भी आसानी से हो जाती है। आज मैंने सोचा कि मैं हिन्दी में बोलूं। मेरे कानों में आज कब्रों में पढ़े हुए बहादुरशाह के बच्चे कहते हैं कि ''तुम किस जबान में बोलते हो? हम भी समझें। हमारे सदियों के अरमानों को हम भी सुनें।''

जायसी ने एक ग्रंथ लिखा है जिसमें वर्णन है कि पृथ्वीराज और संयोगिता दोनों की राखें हमारी बातें सुनने के लिए लालायित हैं और सुनना चाहते हैं कि आप क्या करने आये हैं। आपकी क्या आकांक्षायें हैं, आदर्श हैं, यही वह सुनना चाहते हैं। मैं मानता हूं कि टूटी-फूटी अंग्रेजी में मैं बोल सकता हूं मगर मुझे लंदन वालों को नहीं सुनाना है, अपनी भारतीय जनता को सुनाना है। कब्रों में पड़ी हुई कितनी ही डायनोस्टियों और साम्राज्य दिल्ली के चारों तरफ पुराने मकबरों में वह कब्रें पूछती हैं, दफनाई हुई हड्डियां पूछती हैं कि तुम यहां क्या करने आये हो? तुम क्या कहना चाहते हो? मैं उन्हें बतलाना चाहता हूं कि हम तुम्हारे उन्हीं आदर्शों को लेकर जिनके कारण बहादुरशाह के बच्चों का खून हुआ हमारे सन् 1857 का बलवा हुआ और जिन आदर्शों को लेकर सदियों से हमारी जनता के बच्चे, बूढ़े, मर्द और औरतों ने अपने जीवन बलिदान किये, आज हम उन्हीं प्राचीन आदर्शों को लेकर हजारहा मुश्किलात होते हुए भी आगे बड़े हैं और बढ़ते रहेंगे। हम अपने इस पुनीत निश्चय में दृढ़ हैं और अटल हैं और कोई भी शक्ति

[श्री अलगूराय शास्त्री]

हमें अपने पथ से विचलित नहीं कर सकती। कोई चीज हमको झुका नहीं सकती, यह हमारा निश्चय है। हमारे सोये हुए बुजुर्गों की रूहें हमें पुकार-पुकार कर कहती हैं कि उन्हें उनकी भाषा में सुनाया जाये आज उनकी यह आकांक्षायें हैं, कामनायें हैं।

इसलिए मैंने हिन्दी भाषा में आपके साथ यह निवेदन करने की चेष्टा की। यह प्रस्ताव सर्वथा सब रूप से मानने के लायक है। जयकर साहब ने इस प्रस्ताव के postpone करने की बात की थी। जहां तक रवादारी का ताल्लुक है, हमने इसकी वार्ता, और डॉ. अम्बेडकर ने जो plea ली थी उसके आधार पर यह postpone किया गया था, लेकिन अडंगा लगाने की नीति से कोई आदमी अगर हमें रोकना चाहे, तो हम कदापि नहीं सुन सकते। Fight of freedom once begun... हम अपना कदम आगे बढ़ायेंगे और इस रवादारी में पड़कर हम उस काम को छोड़ने वाले नहीं है। श्री श्यामा का संशोधन यह जो काश्मीरी सिल्क का प्रस्ताव है, उसमें वह एक टाट का पेबन्द है। वह भी reject हो जाना चाहिए और जयकर साहिब का जो संशोधन है वह भी reject हो जाना चाहिये और यह अधिकृत रूप और मौलिक रूप में प्रस्ताव स्वीकृत हो जाना चाहिये।

अध्यक्षः अब बैठक कल सुबह 11.00 बजे तक के लिए स्थगित होती है।

तत्पश्चात् सभा की बैठक मंगलवार 21 जनवरी 1947 को सुबह 11.00 बजे तक स्थगित हो गयी।